कुरुक्षेत्र

ATIONS

सितम्बर 1978

मूल्य : 50 पैसे

संपादकीय

जनसंख्या वृद्धि की रोकथाम के लिए प्रौढ़ शिक्षा

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त गत तीन दशकों में प्रौढ़ व्यक्तियों को साक्षर अथवा शिक्षित बनाने के लिए अनेक कार्यक्रम बने परन्तु निरक्षरता के उन्मूलन पर उनका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। जैसे जैसे जनसंख्या बढ़ती गई, वैसे वैसे निरक्षरों की संख्या में भी वृद्धि होती गई। इस समय हमारे देश की 65 प्रतिशत जनसंख्या निरक्षर है और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में निरक्षरों की संख्या में कमी होने के बजाय 12 करोड़ की वृद्धि हो गई है। आंकड़ों के अनुसार विश्व भर में इस समय 80 करोड़ अपढ़ हैं जिनमें से 43.5 करोड़ तो अकेले अपने ही देश में हैं। इससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हमें जो लोकतन्त्र और स्वतंत्रता प्राप्ति का वरदान मिला उसका हम समुचित लाभ नहीं उठा पाए।

अशिक्षा की इस स्थिति को देख कर ही हमारे कर्णधारों का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ और जून, 1978 में केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने देश में व्याप्त घोर निरक्षरता के उन्मूलन का निर्णय लिया। इस निर्णय के अनुसार ही 2 अक्तूबर, 1978 से 6 अरब रुपये की एक वृहद् योजना के अधीन प्रौढ़ शिक्षा अभियान का प्रारम्भ हो गया है जिसके तहत आगामी 6 वर्षों में 15 से 35 वर्ष की आयु के लगभग 10 करोड़ निरक्षरों को साक्षर बनाया जाएगा। अभियान को कारगर ढंग से चलाने के लिए 30 हजार केन्द्र खोले जायेंगे और 7 सौ से अधिक परियोजनायें चालू की जायेंगी। छठी योजना के प्रथम वर्ष में 45 लाख व्यक्तियों को साक्षर बनाने का लक्ष्य है। इस कार्यक्रम पर जो भी धन व्यय होगा उसका आधा भाग केन्द्रीय सरकार और आधा भाग राज्य सरकारें वहन करेंगी।

प्रौढ़ शिक्षा अभियान का संचालन तो राज्य सरकारों के हाथों में है परन्तु इस कार्यक्रम की एक विशेषता यह है कि इसे पूरे तौर से नौकरशाही के हाथों में न सौंप कर इसका बहुत सा काम सामाजिक तथा स्वयं सेवी संस्थाओं के सुपुर्द किया गया है। इसके साथ ही साथ प्राथमिक शिक्षा का भी एक व्यापक कार्यक्रम चलाने की योजना है जिसके तहत 6 से 14 वर्ष की उम्र वाले बच्चों को शिक्षा देने की व्यवस्था की जा रही है। इस तरह देश में निरक्षरता पर दोहरा प्रहार होने जा रहा है।

जहां तक हमारी आधुनिक शिक्षा प्रणाली का सम्बन्ध है, यह वही शिक्षा प्रणाली है जिसे 150 वर्ष पूर्व मैकाले ने चालाया था और जिसका उद्देश्य देश में अंग्रेजी राज के लिए क्लर्क पैदा करना था। स्वतन्त्रता की प्राप्ति के बाद शिक्षा का प्रचार-प्रसार बढ़ना स्वाभाविक था। परिणाम स्वरूप आज देश में इसी प्रणाली के अधीन 7 लाख संस्थाओं में 35 लाख अध्यापकों के अध्यापकत्व में 10 करोड़ छात्र शिक्षा पा रहे हैं। पर ज्यों-ज्यों ऐसी शिक्षा का प्रसार-बढ़ता गया त्यों-त्यों जनता में, खास कर युवा वर्ग में असन्तोष बढ़ता गया। वास्तव में शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को स्वावलम्बी बनाना तथा रुढ़ियों और मानसिक दासता से मुक्ति दिलाना है परन्तु आज का शिक्षित युवा परमुखापेक्षी, पुरुषार्थहीन और नौकरियों की छीना-झपटी की होड़ में लगा रहता है। अतः इस तथ्य को ध्यान में रख कर हमें अपनी समग्र शिक्षा व्यवस्था को नया रूप देना होगा। जहां तक प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम का सम्बन्ध है, हमें उसकी कार्य प्रणाली में ऐसे तत्व समाविष्ट करने होंगे जिनसे व्यक्ति सच्चे मानों में शिक्षित बने।

इस समय हमारे देश की जन संख्या 60 करोड़ है और इसमें लगातार वृद्धि होती जा रही है। यदि वृद्धि का यही क्रम जारी रहा तो हमारी बसुन्धरा तड़प उठेगी जिससे सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक समस्याओं का बवण्डर उठकर हमारे समाज को चकनाचूर कर देगा। ऐसी स्थिति में प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम में जनसंख्या वृद्धि की रोकथाम को विशेष महत्व दिया जाय और ऐसा पाठ्यक्रम तैयार किया जाय जिसके शिक्षण से लोग छोटे परिवार की महत्ता और परिवार कल्याण की गरिमा को समझ कर परिवार कल्याण कार्यक्रम को सही माने में अमल में ला सकें। इस के साथ साथ प्राथमिक और माध्यमिक पाठशालाओं में परिवार कल्याण शिक्षा भी नितान्त आवश्यक है।

कोई भी पददलित देश तब तक अपना समुचित विकास नहीं कर सकता और न संसार के राष्ट्रों में अपना समुचित स्थान बना सकता है जब तक उसके अधिसंख्य लोग समुचित रूप से शिक्षित न हों। अशिक्षित लोग परिवर्तन विरोधी और रूढ़िग्रस्त होते हैं और सामाजिक जीवन में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में बाधक होते हैं। हमारा देश विकास के पथ पर आरूढ़ है और हमें आशा है कि हमारे कर्णधारों ने

शेष पृष्ठ 3 पर

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र, फोटो आदि भेजिए। भाषा सरल हो और रचना का आकार 'कुरुक्षेत्र' के दो-ढाई पृष्ठ से अधिक न हो।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक 'कुरुक्षेत्र' (हिन्दी), कृषि और सिंचाई मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

दूरभाष : 382406

एक प्रति 50 पैसे — वार्षिक चंदा 5.00 रु०

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : कु० शशि चावला, मोहन चन्द्र मन्टन

आवरण पृष्ठ : आर० सारंगन

कुरुक्षेत्र

वर्ष 24 पौष 1900 अंक 2

इस अंक में : **पृष्ठ संख्या**

गांधी दर्शन में समाजवाद **ब्रजलाल उनियाल**	2
पंचायती राज के नवजीवन	4
पंचायती राज संस्थाओं को सबल बनाने के लिए प्रयास	6
छोटे किसानों की काया पलटने वाला संगठन : लघु किसान विकास अभिकरण **एम० सत्यभामा**	18
सर्वभौम मानव अधिकार	22
लघु कथा : परीक्षा **मनु कौशिक**	24
उत्तर प्रदेश सर्वोत्कृष्ट मानव प्रयास की ओर **रामनरेश यादव**	25
मौत का दूत : मद्यपान **रवीन्द्र सिंह राठौर**	26
कविता निर्माण के पथ में **मोहन जोशी मस्ताना**	27
पहला सुख निरोगी काया : सर्दी के मौसम के रोग और उनका उपचार **वैद्य रघुनन्दन प्रसाद साहू**	28
साहित्य समीक्षा	29
छत्तीसगढ़ का लोक मानस और परिवार कल्याण **नारायण लाल परमार**	32

गांधीदर्शन में समाजवाद

ब्रजलाल उनियाल

यों तो हर साल बाढ़ की तबाही के समाचार अखबारों में पढ़े जाते हैं पर इस साल जब शहर वालों की कमाई और खुशहाली को बाढ़ का पानी लेने लगा तो वे समझे जाके पैर न फटी बिवाई वो क्या जाने पीर पराई, सब जगह हाहाकार मच गया। यह बात प्रसंगवश इसलिए कही जा रही है कि इस तबाही का कारण यही है न कि पानी की अतुल राशि मर्यादा में न रही और ठौर बेठौर बहकर अन्धाधुंध विनाश का ताण्डव करने लगी। बस, इसमें एक सार्वकालिक और सार्वभौमिक सिद्धान्त प्रतिफलित होता है कि जब मर्यादा टूटती है तो वह तबाही पर आमादा हो जाती है। यह पानी सिमट सिमट कर एक ही स्थान पर इकट्ठा होने लगा और जहां भी इकट्ठा हुआ वहीं इसने गजब ढा दिया। इसी प्रकार जब धन कुछ हाथों में इकट्ठा हो जाता है तो वे हाथ प्रायः मर्यादा तोड़ देते हैं। बाढ़ की तबाही तो नजरों को नहीं झुका सकती पर धन की बाढ़ कैसी तबाही मचाती है। इसे कोई देख नहीं पाता। यही कारण है जब कुछ हाथों में धन इकट्ठा हुआ तो उन हाथों ने धन बढ़ाने की अतृप्त पिपासा के कारण शोषण शुरू किया। इस शोषण की प्रक्रिया में दो वर्ग हो गए एक शोषक और दूसरा शोषित। शोषक वर्ग में बुद्धि कौशल तो होता ही है और शोषित वर्ग होता है मेहनतकश सर्वहारा। इस खाई को पाटने का एक तरीका बताया साम्यवाद ने और दूसरा बताया गांधीवाद ने। साम्यवाद साधन नहीं देखता—साध्य देखता है एक वर्गविहीन समाज की रचना, भले ही कितने ही आदमियों की बलि इस उद्देश्य की वेदी पर चढ़ाई जाए। जहां जहां साम्यवाद आया उसकी स्थापना में न मालूम कितने नर-नारियों का कुछ दोषी और कुछ निर्दोषों का खून, बहा। उन्मत्तता यह नहीं देखती कि कसूरवार कौन है; आन्दोलनों की उन्मत्तता में भी यही बात लागू होती है। तब इन परिस्थितियों में गांधी जी ने एक रास्ता सुझाया। उनका लक्ष्य भी वर्ग-विहीन समाज की रचना था, ऐसे समाज की रचना जिसमें शोषण नाम की दुष्ट-प्रवृत्ति पनपने ही न पाए, ऐसे समाज की रचना जहां आर्थिक विषमता न हो, ऐसे समाज की रचना जहां आर्थिक शोषण ही समाप्त न हो, बल्कि हर तरह का बौद्धिक शोषण भी समाप्त हो, जहां जात-पात, ऊंच-नीच आदि का भेदभाव न रहे। मानवता की मूल सद्प्रवृत्ति के प्रति अटूट आस्थावान गांधी जी ने जुलाई 1947 को समाजवाद के विषय में हरिजन में लिखा था कि समाजवाद बहुत ही सुन्दर शब्द है और जहां तक मैं समझता हूं, समाजवाद में समाज के सभी सदस्य समान होंगे, न कोई ऊंच और कोई नीच होगा। शरीर में भी सिर इसलिए ऊंचा नहीं है कि वह शरीर के ऊपरी भाग में है और न पैर नीचे हैं क्योंकि वह निचलेपन में हैं। जैसे शरीर का प्रत्येक अवयव का अपना महत्व है वैसे ही समाजवाद में सबका एक सा महत्व है। मेरी समझ में राजा रंक, अमीर-गरीब, स्वामी-सेवक सभी एक ही स्तर पर हैं। धर्म के मामले में भी समाजवाद में समानता है। यों तो विश्व में चप्पे-चप्पे पर बाहरी विषमता है पर इस विषमता में भी पूर्ण एकता है। समाजवाद का आरम्भ तो एक व्यक्ति से होता है। एक के आगे अगर आप शून्य बढ़ाते जाएं तो उसकी शक्ति दस, सौ और हजार गुनी होती जाएगी, लेकिन अगर वह शुरू करने वाला खुद शून्य है तो उस शून्य के आगे चाहे आप कितने ही शून्य बढ़ाएं वे शून्य ही रहेंगे। अतः समाजवाद का आरम्भ एक से होना चाहिए, शून्य से नहीं। परन्तु समाजवाद जैसे पवित्र लक्ष्य के लिए साधन भी पवित्र होने चाहिए। अपवित्र साधनों से अपवित्र लक्ष्य प्राप्त होता है। सत्य की मंजिल पर असत्य की सीढ़ी से नहीं पहुंचा जा सकता। अहिंसा और सत्य तो एक ही हैं। अहिंसा सत्य में निहित है और सत्य अहिंसा में। ये एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

गांधी जी चाहते थे कि धन या सत्ता कुछ हाथों में केन्द्रित न हो। उनका कहना था कि सत्ता और धन का विकेन्द्रीकरण अन्तिम ध्येय है। इसलिए वे दो बातों पर मुख्य रूप से जोर देते थे। एक तो यह कि छोटे और लघु उद्योगों को भरपूर बढ़ावा मिले ताकि हमारे देश के विशाल जन-बल का भी ठीक उपयोग किया जा सके और दूसरे पूंजी भी एक जगह इकट्ठी न हो सके। जब पूंजी एक जगह इकट्ठी न होगी तो शोषण नहीं होगा। दूसरे, अगर बड़े उद्योग हों भी तो उनके प्रबन्ध में मजदूरों का प्रतिनिधित्व व हित हो, उद्योगपति तो ट्रस्टी हों, अपने को मालिक न समझ बैठें और सबकी जड़ में हो नैतिकता यानी ईमानदारी।

गांधी जी का समाजवाद गीता के छठे अध्याय के दसवें श्लोक से उद्भूत हुआ है। 'एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः' अर्थात् संयत चित्त होकर आकांक्षारहित अपरिग्रही अपने मन को समाहित करे। ईशोपनिषद् से गांधी जी प्रभावित थे और 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा' के स्वयं चलते-फिरते अवतार थे। अगर समाज में कोई धनी है तो उसकी अतुल सम्पदा का वह केवल ट्रस्टी है। उसे तो केवल अपना काम भर चलाने के लिए उसमें से खर्च करना है। सारा पैसा तो समाज का है। वह तो ट्रस्टी है। अगर उस ने अमानत में खयानत की तो वह ईश्वर के सामने जवाबदेह होगा। अगर गांधी जी के इस सिद्धान्त को अपनाया जाए तो इसमें सन्देह नहीं कि यह नारकीय संसार रहने योग्य ही नहीं, स्वर्ग बन जाए।

गांधी जी ने आज से लगभग 37 साल पहले, दिसम्बर 1941 में लिखा था कि आर्थिक समानता के लिए काम करने का अर्थ है कि पूंजी और मजदूर के बीच आन्तरिक संघर्ष को समाप्त कर दिया जाए। दूसरे शब्दों में यों कहें कि कुछ अमीर लोगों को जिनके हाथों में विपुल सम्पत्ति केन्द्रित है उन्हें केवल ट्रस्टी बनाया जाए और दूसरी ओर नंगे भूखों का स्तर उठाया जाए। पर यह हिंसा से सम्भव न होगा। गांधी जी ने यहां तक लिखा कि स्वतन्त्र भारत में ऊंची अट्टालिकाएं और गरीब की झोंपड़ी

साथ साथ नहीं रहेगी—एक न एक दिन इस विषमता का अन्त होकर रहेगा। गांधी जी ने तो यहां तक चेतावनी दी कि यदि ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त को स्वयं अमीर लोगों ने न अपनाया तो हिंसात्मक खूनी क्रान्ति एक न एक दिन हो सकती है।

गांधी जी ने लिखा है कि लोग मेरे ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त की खिल्ली उड़ाते हैं। ऐसे ही अहिंसा के सिद्धान्त के विषय में भी हमारा संकल्प है कि हम इस खड़ी चढ़ाई पर चढ़ेंगे। हमने देखा है कि हिंसात्मक क्रांति के क्या नतीजे हुए हैं। गांधी जी ने कहा था कि क्यों न कांग्रेस के लोग ही शुरूआत करें, कांग्रेस में भी धनी लोग हैं, क्यों नहीं वे इस सिद्धान्त पर काम करते? आप यदि समझते हैं कि स्वराज्य के बाद इस प्रकार के सुधार स्वतः हो जाएंगे तो आप अपने को धोखा दे रहे हैं। ये सुधार आसमान से नहीं टपकेंगे, इसके लिए तो हमें एक एक चप्पा आगे बढ़ना होगा। क्या कांग्रेसी अपने आपसे पूछेंगे कि उन्होंने आर्थिक समानता लाने में कितना योगदान दिया है? इसमें तो दो राय नहीं हैं कि हमें समाजवाद लाना होगा—पर वह समाजवाद गांधी जी के आदर्शों का होगा और उनके ही बताए मार्ग पर चल कर लाया जाएगा।

"तेन त्यक्तेन भुंजीथा:" का सीधा सादा अर्थ यह है कि हम संसार को भोगें तो पर त्याग भाव से। आप बस में बैठते हैं, एक सीट खाली है पर उस पर गीला कागज है आप कागज को उठाते हैं, उसे फेंकते हैं, सीट को अपने प्यारे रूमाल से साफ करते हैं और फिर कहीं उस पर बैठते हैं, आपका स्टैंड आया, आपने सीट की तरफ मुड़ कर भी न देखा, उठे और चल दिए। आपने नहीं कहा, हाय मेरी सीट छूटी जा रही है, सर्वथा असम्पृक्तिभाव से चल दिए। बस, यही उपनिषद् का सिद्धान्त है जिसे गांधी जी ने कहा कि भाई तुम तो केवल बैठने के समय के लिये ही ट्रस्टी हो, उसे थोड़ी सी देर के लिये अपना समझो, फिर जो बैठना चाहे, बैठे, तुम सर्वथा असम्पृक्त रहो। पर क्या यह सिद्धान्त आदमी स्वेच्छा से अपना सकता है? अगर नहीं अपनायेंगे तो परिणाम अच्छे नहीं होंगे। इसमें सन्देह नहीं कि जैसे "सर्वे गुणाः कांचन-माश्रयन्ति" ऐसे ही सर्वेदोषाः 'कांचन-माश्रयन्ति' यानी सभी दोष पैसे में हैं। अतः इस पैसे का महत्व केवल समाजवाद ही कुछ घटा सकता है। जब आर्थिक विषमताएं समाप्त होने लगेंगी तो देश की अनेक बुराइयां और भेदभाव भी लुप्त होने लगेंगे। आज की जात-पात आदि अनेक ऊंच-नीच की भावनाओं की उद्गम यही पैसे की असमानता है। तथाकथित बड़े लोगों में बिना जात-पात की शादियां होने लगी हैं और इस भेदभाव के साथ साथ कुछ पुरानी रूढ़ियां भी दम तोड़ने लगी हैं।

गांधी जी बड़े उद्योगों के विरुद्ध नहीं थे पर वे इस बात के अवश्य विरुद्ध थे कि भारी उद्योगों के पूंजीपति शोषण करें और उद्योगों में दो वर्ग हैं। पूंजीपति स्वेच्छा से ट्रस्टी बन जाए पर क्या ऐसा होगा। संभव है यदि समाज का ढांचा धीरे-धीरे इस ओर प्रवृत्त होता है तो मूल रूप से 'व्यष्टि' के सुधार पर जोर देना होगा। बचपन में ही उस की शिक्षा में यह छुट्टी मिलायी जाए कि 'व्यष्टि' का भले ही स्वतन्त्र 'अस्तित्व' है पर उसको अपना हित समष्टि' के सामने त्यागना चाहिए। शिक्षा में क्रान्तिकारी परिवर्तन करना पड़ेगा। उन्हें गांधी जी के सिद्धान्तों में शिक्षित करना होगा। गांधी जी चाहते थे कि पूरा समाज शुद्ध नैतिकता की नींव पर खड़ा रहे। जैसे भवन में लगी कच्ची ईंटें और खराब मसाला कभी भी भवन को धराशायी कर सकता है ऐसे ही अनैतिक व्यक्तियों से बना समाज कभी भी तहस-नहस हो सकता है।

अतः गांधी जी द्वारा प्रतिपादित आर्थिक समानता का समाजवाद हमारे रूढ़िग्रस्त समाज की सभी समस्याओं के लिए राम बाण है। ●

सम्पादकीय [आवरण पृष्ठ 2 का शेषांश]

प्रौढ़ शिक्षा का जो इतना बड़ा कार्यक्रम अपने हाथों में लिया है उससे लोगों में परिवर्तन के प्रति चेतना पैदा होगी और विकास की गति में तेजी आयेगी।

परन्तु प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ केवल अक्षर ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं है बल्कि प्रौढ़ों में ऐसी चेतना पैदा करना है जिससे वे अपने देश की समस्याओं को समझ सकें, उनके समाधान में योग दे सकें तथा एक धर्म-निरपेक्ष लोकतन्त्रात्मक राष्ट्र में अपने अधिकार और कर्त्तव्यों को भी समझ सकें। यह एक व्यापक विचार धारा है जिसमें प्रौढ़ व्यक्तियों के व्यावसायिक, सामाजिक तथा बौद्धिक विकास से सम्बन्धित शिक्षा को सम्मिलित किया जाता है। यह एक अनवरत प्रक्रिया है और व्यक्ति जीवन भर इससे सीखता रहता है। दूसरे गांवों में लोग अपनी खेती बाड़ी तथा छोटे छोटे उद्योग-धन्धों के कामकाज में लगे रहने के कारण पढ़ने-लिखने के लिए समय देने से कतराते हैं। ऐसी स्थिति में प्रौढ़ शिक्षा का जो पाठ्यक्रम तैयार किया जाए वह उनके कामकाज की शिक्षा से संबंधित होना चाहिए। इससे वे अपने कामकाज में दक्षता प्राप्त कर सकेंगे, साथ ही पढ़ना-लिखना भी सीख कर अच्छे शिक्षित बन सकेंगे।

जहां तक प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के संचालन का सम्बन्ध है, इसमें किसी को एतराज नहीं हो सकता कि इसे सामाजिक संस्थाओं तथा स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से चलाया जाए परन्तु ध्यान रखने की बात यह है कि इसे मंच बना कर किसी विशेष उद्देश्य के लिए इसका दुरुपयोग न हो। यह जनसामान्य का कार्यक्रम है और जन सामान्य का सहभागी होना इस कार्यक्रम में जरूरी है।

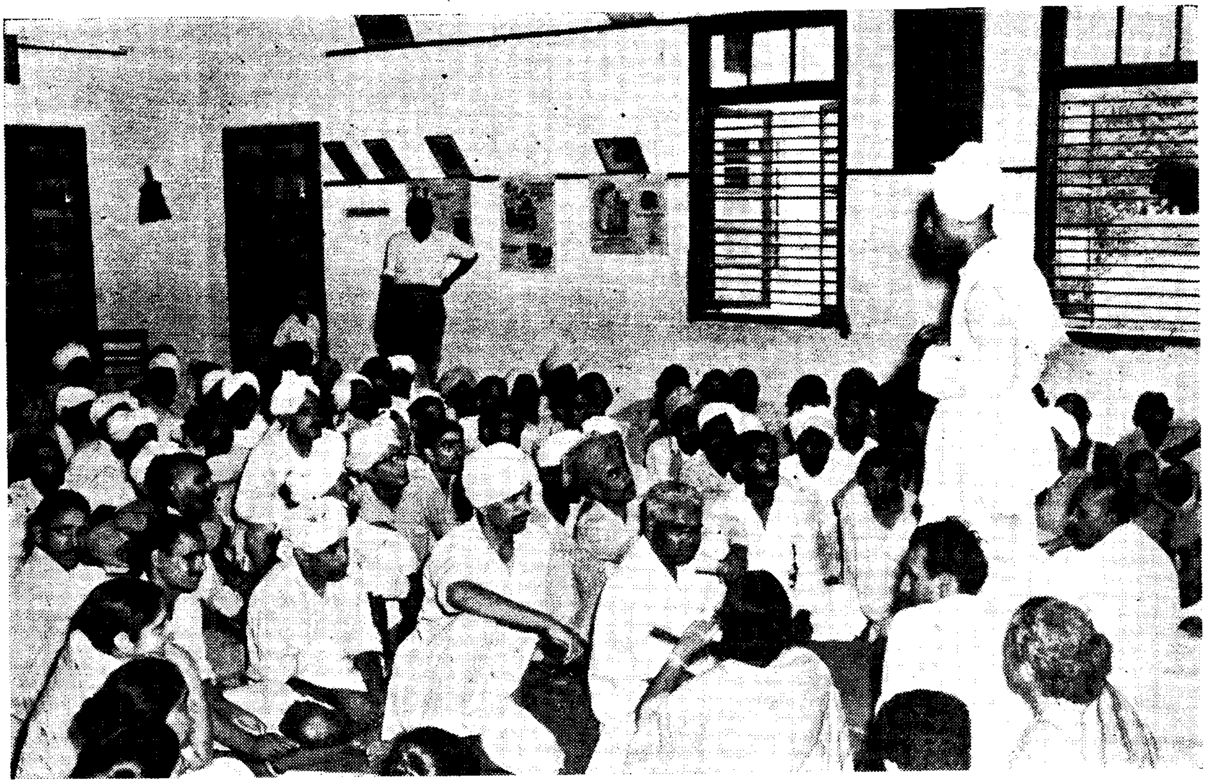

पंचायत की बैठक का एक दृश्य

पंचायती राज को नवजीवन

पंचायती राज सबसे पहले 1959 में राजस्थान तथा आंध्र प्रदेश, में शुरू किया गया था और अब इसके अन्तर्गत आंध्र प्रदेश, असम, बिहार (केवल 8 जिलों में) गुजरात, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल के राज्य आते हैं। तथापि, जम्मू तथा काश्मीर, केरल, मणिपुर, सिक्किम तथा त्रिपुरा के राज्यों में केवल ग्राम पंचायतें कार्य कर रही हैं। नागालैंड तथा मेघालय में कोई पंचायती राज व्यवस्था नहीं है, तथापि नागालैण्ड में इनके स्थान पर क्षेत्र, प्रक्षेत्र तथा आदिवासी परिषदें हैं।

अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह, चण्डीगढ़, दिल्ली तथा गोवा, दमन व दीव के केन्द्र शासित क्षेत्रों में केवल ग्राम पंचायतें कार्य कर रही हैं। अरुणाचल प्रदेश और दादरा तथा नगर हवेली में क्रमशः त्रिस्तरीय और द्वि-स्तरीय पंचायती राज प्रणाली है। पांडिचेरी में "पांडिचेरी ग्राम तथा कम्यून पंचायत अधिनियम" के कुछ उपबन्धों को लागू किए जाने पर यहां पहली बार पंचायती राज संस्थाएं स्थापित की गई हैं। यह वर्तमान नगर पालिका कम्यूनों को अल्पकालिक प्रबन्ध के रूप में कम्यून पंचायत परिषदों का उत्तराधिकारी घोषित करके किया गया है।

भारत में इस समय 222055 ग्राम पंचायतें हैं। इनके अन्तर्गत 585436 गांव और 4431.03 लाख आबादी है।

इसके अतिरिक्त, 4028 पंचायत समितियां और 262 जिला परिषदें कार्य कर रही हैं।

शक्तियों का हस्तांतरण

पंचायती राज संस्थाओं द्वारा किए गए कार्यों का पुनरावलोकन करने में इस बात को देखना जरूरी है कि उन्हें वास्तव में किस सीमा तक अधिकार और संसाधन सौंपे गए हैं। उन्हें शक्तियों तथा दायित्व केवल संबंधित राज्य विधानों से ही नहीं वरन् राज्य सरकारों द्वारा सांविधिक उपबन्धों को व्यवहार में कार्य रूप देने के लिए निर्धारित की गई प्रशासनिक तथा वित्तीय कार्यविधियों से भी प्राप्त होते हैं। अधिकांश राज्यों ने पंचायती राज संस्थाओं को राज्य योजनाओं के अन्तर्गत व्यापक गतिविधियोंके लिए उत्तरदायित्व सौंपे हैं। पंचायती राज संस्थाओं के बारे में कार्यक्रम का अधिकाधिक विकेन्द्रीकरण तथा संसाधनों का हस्तांतरण बुनियादी महत्व के हैं, अतः इनके लिए राज्य सरकारों पर जोर दिया जाता रहा है।

स्थानीय साधन जुटाना

पंचायती राज संस्थाओं की आत्मनिर्भरता, अन्य बातों के साथ साथ, इस बात पर निर्भर करती है कि वे किस सीमा तक कर तथा दूसरे उपायों से स्थानीय संसाधन एकत्रित कर सकती हैं।

पंचायती राज संस्थाओं द्वारा प्रभावी ढंग से कार्य करने के लिए एक आवश्यक बात यह है कि इन स्थानीय विकास प्रशासन की यूनिटों के चुनाव समय-समय पर नियमित रूप से कराये जाएं। आंध्र प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, केरल तथा पश्चिम बंगाल के राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव अभी होने हैं।

यह विभाग अखिल भारतीय पंचायत परिषद जैसे संगठनों को उनके प्रशासनिक व्यय में आर्थिक सहायता दे रहा है। वर्ष 1976-77 के दौरान अखिल भारतीय पंचायत परिषद् को 10,000 रुपए का सहायक अनुदान दिया गया था।

ग्राम स्तर पर विकास कार्यक्रमों में पंचायती राज संस्थाओं के महत्व तथा ग्राम विकास की प्रक्रिया में उनके पूरे सहयोग के बारे में अत्यावश्यकता को ध्यान में रखते हुए श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में एक उच्चाधिकार समिति गठित की गई जिससे कि इन निकायों की कमजोरियों का मूल्यांकन किया जा सके और उन्हें मजबूत बनाने के लिए उपाय सुझाये जा सकें। विचारार्थ विषय यें थे :—

(1) राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के सम्बन्ध में वर्तमान स्थिति और जिला से गांव स्तर तक पंचायती राज संस्थाओं की कार्य प्रणाली का पुनरीक्षण ताकि कमियों तथा त्रुटियों का पता लगाया जा सके। विशेषकर निम्निलिखित के संदर्भ में इन संस्थाओं की कार्य-प्रणाली की जांच करना :—

(क) संसाधन जुटाना।

(ख) ग्रामीण विकास की स्कीमों का यथार्थ तथा आशावादी ढंग से और समाज के कमजोर वर्गों के हितों को ध्यान में रखते हुए आयोजन और कार्यान्वियन।

(2) चुनाव प्रणाली, सहित, पंचायती राज संस्थाओं की गठन पद्धति की जांच करना तथा पंचायती राज प्रणाली के कार्यनिष्पादन पर उनके प्रभावों का मूल्यांकन।

(3) भविष्य में समैकित ग्रामीण विकास के लिए पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका तथा उनके द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्यों संबंधी सुझाव देना।

(4) पंचायती राज संस्थाओं को अपनी भावी भूमिका निभाने में समर्थ बनाने के उद्देश्य से उनके पुनर्गठन एवं कमियों और त्रुटियों को पूरा करने के उपाय सुझाना।

(5) पंचायती राज संस्थाओं, सरकारी प्रशासन-तंत्र तथा ग्रामीण विकास में संलग्न सहकारी तथा स्वयंसेवी संस्थाओं के बीच बने रहने वाले संबन्धों के रूप तथा प्रकार संबंधी सिफारिशें देना।

(6) पंचायती राज संस्थाओं को सौंपी जाने वाली जिम्मेदारियों को निभाने के लिए पर्याप्त धन की उपलब्धि को सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक, वित्त संबंधी मामलों सहित, अन्य सिफारिशें करना।

समिति को 6 महीने के अन्दर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करनी है और यदि आवश्यक हो तो वह अंतरिम रिपोर्ट भी प्रस्तुत कर सकती है।

समिति की रिपोर्ट अब हमारे आगे है और इसकी सिफारिशों में मूल भावना यह है कि सत्ता का विकेन्द्रीयकरण कर पंचायती राज को संस्थागत रूप प्रदान किया जाए। समिति ने अपनी सिफारिशों में यह भी कहा है कि संविधान में संशोधन कर राज्य सरकारों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को और अधिकार दिए जाय। समिति का एक मुख्य सुझाव यह है कि ग्राम पंचायतों की जगह मंडल पंचायतों की स्थापना की जाए तथा जिला परिषदों को मजबूत बना कर जिलाधीश सहित जिला स्तर के सभी अधिकारियों को अन्ततः उनके अधीन रखा जाये।

समिति के सुझावों की मूल भावना के अनुरूप यदि राज्य सरकारें अपने कुछ अधिकार पंचायती राज संस्थाओं को सौंपती है तो केन्द्रीय सरकार को भी कुछ अधिकार राज्य सरकारों को सौंपने पड़ेंगे।

इसमें शक नहीं है कि अशोक मेहता समिति की सिफारिश काफी महत्वपूर्ण है और यदि उनको अमल में लाया जाये तो देश में पंचायती राज का कायापलट होगा। परन्तु जहां तक ग्राम पंचायतों की सथापना को भंग कर मंडल पंचायतों की स्थापना के सुझाव का संबंध है, यह कुछ विवाद का विषय हो सकता है। गांधी जी की कल्पना में ग्राम राज की मूल इकाई गांव ही रहा है। ग्राम पंचायतों की समाप्ति का अर्थ मूल इकाई को ही समाप्त करना है। अतः जरूरी है कि ग्राम पंचायत की स्थापना को बनाये रखा जाए।

पुरस्कार देने की योजनाएं

ग्राम सेवकों, ग्राम सेविकाओं तथा ग्रामों के लिए पुरस्कार प्रतियोगिता का उद्देश्य है उत्कृष्ट कार्यकर्त्ताओं को प्रोत्साहन तथा बढ़ावा देना और प्रशंसनीय कार्यों को मान्यता प्रदान करना। 1976-77 में कोई पुरस्कार प्रतियोगिता आयोजित नहीं की जा सकी। यह 1977-78 के लिए होने वाली प्रतियोगिता के साथ ही 1977-78 में आयोजित की जाएगी। इसलिए विजेताओं को पुरस्कार देने के लिए चालू वर्ष में 7.17 लाख रुपये की धनराशि का प्रस्ताव रखा गया है। ●

अशोक मेहता कमेटी की जोरदार सिफारिशें

पंचायती राज संस्थाओं को सबल बनाने के लिए नए प्रयास

मंत्रिमंडल सचिवालय ने अपने प्रस्ताव दिनांक 12 दिसम्बर, 1977 के द्वारा पंचायती राज संस्थाओं के बारे में एक कमेटी बनाई थी।

प्रस्ताव में कहा गया है कि :

"सरकार देहातों के विकास-कार्य को चोटी का स्थान देती है, ताकि खेती की उपज बढ़ाई जा सके, रोजगार के और अवसर पैदा किए जा सकें, गरीबी को मिटाया जा सके और देहातों की आर्थिक दशा में क्रांति लाई जा सके। सरकार का विचार है कि इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए यह जरूरी है कि योजना को बनाने और उसे अमल में लाने के काम को अधिक-से-अधिक फैलाया जाए। तदनुसार राज्य सरकारों और संघ राज्य क्षेत्रों की सलाह से उसने एक कमेटी बनाने का फैसला किया है जो पंचायती राज संस्थाओं के काम करने के तरीके की जांच करेगी और उनकी जड़ें मज़बूत करने के उपाय सुझाएगी ताकि आयोजन और विकास के फैलाव की व्यवस्था को कारगर बनाया जा सके।"

कमेटी में प्रधान श्री अशोक मेहता के अलावा जो व्यक्ति शामिल थे, उनके नाम इस प्रकार हैं :—

(1) श्री अशोक मेहता, प्रधान
(2) श्री कर्पूरी ठाकुर, मुख्य मंत्री, बिहार
(3) श्री प्रकाश सिंह बादल, मुख्य मंत्री, पंजाब
(4) श्री एम० जी० रामचन्द्रन, मुख्य मंत्री तमिलनाडु
(5) श्री बी० शिवरामण, सदस्य, योजना आयोग
(6) श्री मंगल देव, संसद् सदस्य
(7) श्री कुंवर महमूद अली खान, संसद् सदस्य
(8) श्री अन्ना साहेब पी० शिन्दे, संसद् सदस्य
(9) श्री ई० एम० नम्बूदरीपाद्, त्रिवेन्द्रम
(10) श्री एस० के० डे, नई दिल्ली
(11) श्री सिद्धराज ढड्ढा, जयपुर
(12) प्रो० इकबाल नारायण, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।
(13) श्री वल्लभभाई पटेल, प्रधान, जिलापंचायत, राजकोट।

कमेटी को निम्नलिखित कार्य सौंपे गए थे :—

(1) राज्य में और संघ राज्य क्षेत्रों में विकेन्द्रीकरण सम्बन्धी वर्तमान स्थिति और ज़िले से लेकर ग्राम स्तर तक पंचायती राज संस्थाओं के कार्यकरण पर फिर से नज़र डालना, ताकि कमियों और त्रुटियों का पता लगाया जा सके। खासतौर से निम्नलिखित के सम्बन्ध में इन संस्थाओं के कार्यकरण पर विचार करना :—

(क) साधन जुटाना,

(ख) निःस्वार्थ भाव से और पूर्ण आस्था के साथ समाज के कमजोर वर्गों के हितों को देखते हुए ग्राम विकास के लिए योजनाएं तैयार करना और उन्हें अमल में लाना।

(2) पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव और उनके गठन के तरीकों पर विचार करना और यह आंकना कि पंचायती राज पद्धति को चलाने पर उनका क्या असर पड़ेगा।

(3) पंचायतीराज संस्थाओं की भूमिका और आगे चलकर समन्वित ग्राम-विकास के लिए उनकी मार्फत हासिल किए जाने वाले उद्देश्य तय करना।

(4) पंचायती राज पद्धति के पुनर्गठन और कमियां तथा त्रुटियां दूर करने के उपाय सुझाना, ताकि ये संस्थाएं आगे चलकर अपनी सही भूमिका अदा कर सकें।

(5) यह सिफारिश करना कि ग्राम विकास में शामिल होने वाली पंचायती राज संस्थाओं, सरकारी शासन-तंत्र और सहकारी तथा स्वयंसेवी संस्थाओं के बीच कैसा और कितना नाता-रिश्ता होना चाहिए।

(6) वित्तीय मामलों आदि के बारे में ऐसी अन्य सिफारिशें करना जो पंचायती राज संस्थाओं को सौंपी जाने वाली जिम्मेदारियों को पूरा करने के वास्ते पर्याप्त मात्रा में पैसा प्राप्त करने के लिए जरूरी हों।

कमेटी की पहली बैठक 31 जनवरी, 1978 को हुई थी। इसमें निश्चय किया गया कि आंकड़े और सभी प्रकार की राय हासिल करने के लिए क्या तरीका अपनाया जाए। कमेटी ने फैसला किया कि प्रश्नावलि जारी करके, राज्य स्तर पर बैठकें बुलाकर, चार प्रादेशिक गोष्ठियों का आयोजन करके और अनेक मशहूर व्यक्तियों के साथ विचार-विमर्श करके विभिन्न प्रकार की राय जानी जाए। प्रश्नावलि का उद्देश्य पक्ष-विपक्ष में मत प्राप्त करना नहीं था, बल्कि इस सम्बन्ध में विचार प्राप्त करना था कि पंचायती राज सम्बन्धी कार्य किस प्रकार सौंपे जाएं और किस प्रकार उनका पुनर्गठन किया जाए। राज्य सरकार के स्तर पर जो चर्चा हुई, उसमें मुख्य मंत्री और उसके मंत्रिमंडल के सहयोगियों, विधायकों, पंचायती राज संस्थाओं के कार्यकर्ताओं और प्रशासकों, के साथ हुई बैठकें भी शामिल थीं। कमेटी के सदस्यों ने अलग-अलग समूह बनाकर विभिन्न राज्यों का दौरा किया और उन्हें कोई डेढ़ हज़ार व्यक्तियों से मिलने का सुयोग प्राप्त हुआ। चार प्रादेशिक गोष्ठियां हुई—

एक दक्षिणी क्षेत्र के लिए हैदराबाद में, दूसरी पश्चिमी क्षेत्र के लिए लोनावला में, तीसरी उत्तरी क्षेत्र के लिए जयपुर में और चौथी पूर्वी क्षेत्र के लिए पटना में । इन गोष्ठियों में विद्वानों, कार्यकर्त्ताओं और प्रशासकों ने पांडित्यपूर्ण वातावरण में जी खोल कर एक दूसरे के सामने अपने विचार रखे । इन चार विचार गोष्ठियों में 120 से भी अधिक व्यक्तियों ने हिस्सा लिया । कमेटी ने राज्य सरकारों के पास कोई बारह हज़ार प्रश्नावलियां भेजीं, जो और आगे सरकारी विभागों/संगठनों, विधायकों, पंचायती राज अधिकारियों, प्रशासकों, विद्वानों और पंचायती राज संस्थाओं में रुचि रखने वाले अन्य लोगों के पास भेज दी गई । एक हज़ार से भी अधिक उत्तर प्राप्त हुए । प्रो० इकबाल नारायन के निर्देशन में राजस्थान विश्वविद्यालय में इन उत्तरों की बारीकी से जांच की गई । कमेटी को जिन व्यक्तियों से भेंट करने का अवसर मिला उनमें प्रधान मंत्री, कुछ केन्द्रीय मंत्री, राजनैतिक दलों के नेता, स्वयं सेवी संगठनों के प्रतिनिधि, अन्य जाने-माने जानकार और श्री जयप्रकाश नारायण और डा० नारमन बोर्लोग जैसे जगत् प्रसिद्ध व्यक्ति भी शामिल थे ।

कमेटी ने अपनी अन्तिम रिपोर्ट प्रधान मंत्री को 21 अगस्त, 1978 को दे दी थी ।

पहलू और सिफारिशें

हमने अपने विचारों, सुझावों और सिफारिशों को पेश करने का जो तरीका अपनाया है, वह घिसी-पिटी लीक से कुछ हटकर है । कारण यह है कि हम बराबर इस बात की कोशिश करते रहे हैं कि पंचायती राज संस्थाओं के बारे में कोई नया पहलू पेश किया जाए । हम एक-एक बात को लेकर आगे नहीं बढ़े हैं, जैसा कि आमतौर पर होता है , बल्कि हमने कुछ ऐसी खास मदें चुनली हैं, जो एक दूसरे से सम्बन्ध रखती हैं और एक-दूसरे पर प्रकाश भी डालती हैं। अपनी रपट में हमने जोर आम निर्देशन पर दिया है, न कि किन्हीं मदों की विशेषताओं पर, जैसा कि हमारी जैसी विभिन्न रपटों में आमतौर पर अब तक किया गया है । पंचायती राज की संस्थाएं कैसी हों, ढांचा क्या हो और कार्य करने की कौन-सी खास विधियां अपनाई जाएं, यह हमारी राय में समय और काल के अनुसार बदलती रहती हैं। हम तो केवल इतना ही कर सकते हैं कि संभावनाओं की ओर संकेत भर कर दें और यह काम विभिन्न राज्य सरकारों का होगा कि वे अपनी बदलती हुई जरूरतों को ध्यान में रखते हुए अपना असली ब्योरा खुद तैयार करें । जरूरतों में अन्तर जो भी हो, उन्हें इस महत्व की बात को ध्यान में रखना होगा कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण वाली संस्थाओं का तालमेल समाज के आर्थिक विकास के साथ किस तरह बैठाया जाए ।

इस पहलू से देखा जाए तो हमारे लिए अतीत का महत्व केवल इतना है कि हम अतीत के सूत्र को पकड़ कर किस प्रकार आगे बढ़ें। पंचायती राज की इस समूची पद्धति को कई प्रकार के आघात लगे हैं, जिनके कारण वह काफी निस्तेज और निर्बल हो गई है । विकास का दिनों-दिन बढ़ता हुआ और जटिल कार्यक्रम पंचायती राज संस्थाओं से अलग-थलग पड़ गया है । वैसे ये संस्थाएं पर्याप्त भी नहीं थीं । नौकरशाही निर्वाचित निकायों की मार्फत कार्यक्रम को पूरा करने में स्वयं को उसके अनुरूप ढालने में असफल रही है । राजनीतिक दलों ने इन संस्थाओं के सिर पर अपना वरद् हस्त नहीं रखा है । पंचायती राज संस्थाओं को कार्य रूप देने में बहुत सी अन्दरूनी खामियां बाधक रही हैं। सबसे बढ़कर कमी यह रही है कि पंचायती राज के बारे में कोई साफ तस्वीर उभर कर सामने नहीं आई है । उसका धुंधला चित्र ही हमारे सामने आता रहा है ।

यह भी कुछ खेदजनक ही है कि न तो उन्हें महत्व के काम कभी सौंपे गए हैं और न ही लगन के साथ लगातार उनका काम जारी रखा गया है । विकास के कार्यक्रम उनकी मार्फत नहीं चलाए गए । ऊंच नीच और गुटबन्दी जैसी वृत्तियां तो समाज के अन्य वर्गों में भी व्याप्त हैं, तो फिर केवल पंचायती राज संस्थाओं को दोष देना बेकार है । इस पद्धति ने अनेक सफलताएं प्राप्त की हैं। इसने देश की भूमि में लोकतंत्र के बीज बोए हैं। नौकरशाही और ग्राम जनता के बीच की खाई को पाटा है और एक ऐसा नया नेतृत्व प्रदान किया है जो न केवल उम्र में छोटा है, बल्कि जो सामाजिक फेरबदल में विश्वास रखता है, उसका विरोध नहीं करता ।

पंचायती राज लोकतंत्र की तरह राष्ट्र और राज्य के स्तर पर साध्य भी है और साधन भी । साध्य के रूप में यह लोकतंत्र का एक अनिवार्य विस्तार है तो साधन के रूप में वह राष्ट्र तथा राज्य के स्तर पर ऐसे दायित्वों को निभाता रहेगा जो अभी तक उसे पूरी तौर पर नहीं सौंपे गए हैं । कुल मिलाकर साधन और साध्य के रूप में पंचायती राज न केवल ग्रामों में बसे भारत के जीवन दर्शन को, बल्कि एक फलदायी जीवन पद्धति को भी समृद्ध करता रहेगा ।

राजनीतिक और सामाजिक विकास की दृष्टि से भी यह निहायत जरूरी है कि राज्य स्तर से नीचे के स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्थापना की जाए । लोकतांत्रिक संस्थाएं, जिनके लिए सभी स्तरों पर नियत समय पर चुनाव होते रहें, एक ऐसा मंच प्रदान करेंगे जहां समाज के कमज़ोर वर्ग और अधिक संख्या में, अपनी शक्ति का परिचय दे सकेंगे । अलग-अलग स्तरों पर जब जनता तथा राजनीतिक पार्टियों को शक्ति प्रयोग के पर्याप्त अवसर मिलेंगे तो राष्ट्र की शक्ति, जो राजनीतिक स्तर पर एक-दूसरे पर कीचड़ उछालने में नष्ट होती है, नष्ट होने से बच जाएगी। इसके सुखद नतीजे निकलेंगे । इससे राजनीतिक पार्टियों में स्वस्थ होड़ और आपसी भाई-चारे की भावना पैदा होगी और वे एक बिरादरी की तरह सामूहिक रूप से विकास कार्यों में हाथ बटा सकेंगे ।

हमने यह सिफारिश की है कि राज्य सरकार की शक्तियों का खासा भाग स्थानीय संस्थाओं को सौंप दिया जाए । ज़ाहिर है कि हमारी इस सिफारिश का असर केन्द्रीय सरकार और राज्यों के बीच शक्तियों के बंटवारे की मौजूदा योजना पर भी पड़ेगा। इसके लिए ब्योरेवार अलग से विचार करने की ज़रूरत पड़ेगी । इन संस्थाओं को उचित दर्जा मिले और उनके काम का सिलसिला बराबर बना रहे, इसके लिए कमेटी की राय है कि भारत सरकार

को इस बारे में सावधानी से विचार करके संविधान में कोई व्यवस्था कर देनी चाहिए ।

1957 में बलवन्तराय मेहता अध्ययन दल की रपट के बाद भारत के देहातों में संस्था खड़ी करने के दृष्टिकोण में परिवर्तन आ गया है । इसका कारण यह है कि काम का दायरा बढ़ गया है, कार्य-क्षेत्र भी यत्र-तत्र बिखरा हुआ है और विकास-कार्य भी टेढ़ी प्रकृति के हैं। इसके अलावा नीतियों में भी अच्छे खासे परिवर्तन हो चुके हैं। इनमें से कुछ अति महत्वपूर्ण परिवर्तन इस प्रकार हैं :—

(क) खेतीबाड़ी का काम, जो पहले खड़े पानी की तरह शान्त था, अब उसमें चौमुखा प्रवाह आ गया है ।

(ख) खेती-बाड़ी की धारणा अब व्यापक हो चली है । डेयरी, पशु-पालन, मछली पालन, सामूहिक जंगल जैसे सम्बद्ध उद्योग भी उसमें शामिल होने लगे हैं, जिनका कि कमज़ोर वर्गों की आर्थिक दशा से खास सम्बन्ध है ।

(ग) और बड़े पैमाने पर खेती की नई तकनीकी जानकारी सुलभ हो गई है, जिसमें बड़ी और छोटी सिंचाई व्यवस्था का वैज्ञानिक उपयोग भी शामिल है ।

(घ) स्थानीय उत्पादन केन्द्रों पर स्थित घरेलू तथा ग्राम उद्योगों के प्रति राष्ट्रीय नीतियों में फेर बदल होती रही है ।

(ङ) पैदावार बढ़ाने वाली योजनाओं को कारगर तरीके से चलाने के लिए अब सहकारी समिति जैसी संस्थाओं से और ज्यादा कर्ज़ मिल सकता है ।

(च) हाट एवं बिक्री व्यवस्था का महत्व बढ़ता जा रहा है। इसमें अतिरिक्त स्थानीय सौदे भी शामिल हैं।

(छ) विकास केन्द्रों की स्थापना और देहातों तथा शहरों के आपसी सम्बन्धों के पलड़े बराबर रखने की जरूरत महसूस होने लगी है ।

(ज) मिल-जुल कर काम करने की भावना पर पहले से अधिक जोर दिया जाने लगा है ।

(झ) खासतौर पर गरीब किसान और आमतौर पर समाज के गरीब तबके को एकजुट करने और उनकी मदद के लिए खास तरीकों की ओर और ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है।

(ञ) विकास की प्रेरणा के कारण अब देहाती क्षेत्रों में कल्याण कार्यों की ओर नागरिक सुविधाओं की जरूरत और विभिन्न प्रकार की तकनीकी सेवा की जरूरत महसूस की जाने लगी है ।

पंचायती राज संस्थाओं, उसके ढांचों और कार्यों की रूप-रेखा का मेल न सिर्फ विकास की बढ़ती हुई गति से, बल्कि उसकी नीतियों से भी होना चाहिए । विकास और प्रशासन के नए ढांचों के अथवा स्थानीय स्तर पर विकास प्रबन्धकों को चालू विकास-कार्यों की संचालन सम्बन्धी जरूरतों पर ध्यान देना ही होगा । अतः इन पंचायती राज संस्थाओं को आने वाले दस-बीस वर्षों में इस बात के लिए तैयारी करनी होगी कि वे देहातों की तेजी से बदलती हुई परिस्थितियों में भी लोकतंत्र पर आधारित विकास का प्रबन्ध कर सकें।

राज्य सरकारों को यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि बढ़ते हुए विकास-कार्यक्रमों का दूर से अथवा केवल सरकारी मशी-नरी की मार्फत प्रबन्ध चलाने के क्या सामाजिक दायित्व होंगे । यदि वे विकास कार्यक्रमों को पूरा करने की जिम्मेदारी छोटे स्तरों को सौंप देते हैं तो वे अपना ध्यान नीतियों को संवारने और विकास प्रशासन की चुनौतियों का सामना करने के लिए उच्च स्तर के नीति-निर्धारण की ओर केन्द्रित कर सकेंगे। इनमें ग्राम, भूमि सम्बन्धी ढांचे की त्रुटियां, खेती के नए-नए-ढंग, गांवों में उद्योग धन्धे स्थापित करना, एक-सी शर्तों पर ऋण की प्राप्ति और प्राकृतिक साधनों के पूरे-पूरे उपयोग के लिए योजना बनाने जैसे विषय भी आ जाते हैं।

ढांचा

देहातों में विकास की गति को चारों ओर फैलाने के लिए यह आवश्यक है कि राज्य स्तर से नीचे के स्तर पर बढ़िया तकनीकी जानकारी मिल सके । अनेक मामलों में तो जिला स्तर पर उसका फैलाव किया जा चुका है । अतः सबसे अधिक जरूरत इस बात की है कि सबसे पहले जिला स्तर पर विकेन्द्रीकरण हो और उसकी देखभाल जनता के स्तर पर है ।

जिला स्तर से नीचे के विकास प्रबन्ध में सार्थक साझेदारी के लिए कई गांवों को मिलाकर मंडल पंचायतें बनाई जा सकती हैं। इसमें न केवल आर्थिक आत्म-निर्भरता ही आएगी, बल्कि इसका परिणाम यह भी निकलेगा कि जनता के प्रतिनिधि बहुत सी स्थानीय स्तर पर चलने वाली छोटी-छोटी परियोजनाओं की देखभाल कर सकेंगे । इनमें से ज्यादातर परियोजनाएं ऐसी हैं जो पूरी तरह गांव पर निर्भर नहीं हैं, बल्कि उन्हें ऐसी तकनीकी जानकारी की जरूरत होगी जो ग्राम पंचायत के बल-बूते की नहीं है । परिवार पर आधारित कार्यक्रम की ओर, जिसमें चार सौ परिवार शामिल हों, यदि ध्यान दिया जाए तो उसके लिए आज के मुकाबले और बड़ी यूनिटों की जरूरत पड़ेगी । ऐसी मंडल पंचायत 15 से 20 हज़ार लोगों की सेवा कर सकेगी । वह जरूरी विकास की योजनाओं और विकास केन्द्रों के साथ आवश्यक तालमेल भी रख सकेगी । वह शहर और देहात के बीच बढ़ते हुए सम्पर्क सूत्रों को होशियारी से संभाल सकेगी ।

जहां हम जिला स्तर पर जिला परिषद् और एक मंडल पंचायत जैसी दो सीढ़ियों वाली व्यवस्था को तरजीह देते हैं, वहां हमें इस बात की जानकारी है कि दो अन्य सीढ़ियां पहले ही मौजूद हैं। अतः हमने जिस डिज़ाइन की संस्था का सुझाव दिया है, उसे पूरी तरह अमल लाने में अभी समय लग सकता है । खण्ड स्तर की पंचायत समितियों को तो जिला परिषदों की कार्यपालक समितियों का रूप दे दिया जाएगा और जब मंडल पंचायतें काम करने लगगी तो उनके ज्यादातर काम मंडल पंचायतें संभाल लेंगी । इस बीच राज्य अपनी

सुविधा, अपनी जरूरत और विकास की अवस्था को ध्यान में रखते हुए खण्ड स्तर को चालू रख सकते हैं। गांवों के स्तर पर लोग मंडल पंचायतों में ग्राम समितियों के ज़रिए भागीदार बन सकते हैं। ग्राम समितियां नागरिक सुविधाओं तथा उनसे सम्बन्धित कल्याण कार्यों की व्यवस्था कर सकेंगी। मंडल पंचायतें बनने तक वर्तमान ग्राम पंचायतों का एक संघ बना लेना उचित होगा।

गठन

जहां तक पंचायती राज की विभिन्न सीढ़ियों के गठन का सम्बन्ध है, हम यह स्पष्ट कर देना चाहेंगे कि ढांचा कैसा भी क्यों न हो, सभी स्तरों पर सीधे चुनाव को अन्य बातों के मुकाबले प्रधानता दी जानी चाहिए। चुनाव में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियों के लोगों को आबादी के आधार पर प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। ज़िला परिषद् के प्रधान को परोक्ष रूप से चुना जाएगा। मंडल पंचायत के प्रधान का चुनाव राज्य अपने-अपने निश्चय के अनुसार प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष किसी भी रूप में कर सकते हैं। सभी निर्वाचित इकाइयों का कार्यकाल चार वर्ष का होगा और जहां तक संभव हो, इन संस्थाओं के चुनाव साथ-साथ होने चाहिएं।

जहां तक पहाड़ी अथवा रेगिस्तानी अथवा उन इलाकों का सम्बन्ध है जिनमें आदिवासी बहुसंख्या में हैं, ढांचे सम्बन्धी हमारे सुझावों में परिवर्तन करना आवश्यक होगा। इस दृष्टि से आदिवासी क्षेत्रों में जरूरत के अनुसार थोड़ी आबादी के लिए मंडल पंचायतें बनाई जा सकती हैं। जिन तहसीलों/खंडों में परम्परा से तगड़े आदिवासी संगठन काम कर रहे हैं, वहां उन्हें अपने सामाजिक दायित्व पूरे करने की छूट दी जा सकती है। इसी प्रकार छठी अनुसूची अधीन संविधान द्वारा स्थापित ढांचों के साथ भी छेड़-छाड़ करने की ज़रूरत नहीं है।

जिला परिषद में छः प्रकार के सदस्य होने चाहिएं: जैसे उचित हदबन्दी वाली चुनाव डिवीजन से चुने जाने वाले सदस्य, पद के नाते पंचायत समितियों के प्रधान, बड़ी नगरपालिकाओं के नामज़द सदस्य, जिला-स्तर के सहकारी संघ के नामज़द सदस्य, जिला परिषद् के चुनावों में सबसे ज्यादा वोट पाने वाली दो महिलाएं (यदि किसी भी महिला ने चुनाव न लड़ा हो तो उस अवस्था में दो महिलाओं को शामिल किया जा सकता है) और दो शामिल किए गए सदस्य—एक जो देहात के विकास में खास दिलचस्पी रखता हो और दूसरा जो यूनिवर्सिटी/कालेज अध्यापकों से लिया गया हो। जिला परिषद् के प्रधान का चुनाव सभी सदस्यों द्वारा सीधे निर्वाचित और पदेन सदस्यों में से किया जाएगा।

जिला परिषद् का काम अनेक समितियां चलाएंगी। इनमें कुछ महत्वपूर्ण समितियां भी होंगी जिनका सम्बन्ध खेती, शिक्षा, लघु उद्योगों, वित्त और सार्वजनिक निर्माण कार्यों से होगा। सभी समितियों का गठन अनुपाती प्रतिनिधित्व के आधार पर होगा ताकि सभी वर्गों और विचारों के लोगों का प्रतिनिधित्व उनमें हो सके। इन समितियों के प्रधानों की एक समिति जिला परिषद् की स्थायी समिति के रूप में काम करेगी। जिला परिषद् तथा अन्य स्तरों पर भी सामाजिक न्याय के बारे में एक समिति होगी। जिला परिषद् के सभी सदस्य और सम्बन्धित जिले के विधान सभा सदस्य, विधान, परिषद् सदस्य और संसद् सदस्य जिला स्तर पर योजना समिति के सदस्य होंगे जो योजनाएं तैयार करेंगी और समय-समय पर उन पर फिर से विचार भी करती रहेंगी। शिक्षा कर्मचारियों की तबादले जैसी समस्याओं के बारे में एक उपयुक्त समिति होगी। इसमें जिला परिषद् के सदस्य, राज्य सरकार का एक प्रतिनिधि और जिला शिक्षाधिकारी शामिल होगा ताकि तबादलों और नियुक्तियों के तरीके में समानता लाई जा सके।

पंचायत समितियों में, जब तक वे बनी रहेंगी, निम्न प्रकार के सदस्य होने चाहिएं: (1) जहां-जहां मंडल पंचायतें बनें वहां वहां पद के नाते होने वाले प्रधान, (2) मंडल पंचायत इलाकों की चुनाव डिवीजनों से चुने गए जिला परिषद् सदस्य, (3) छोटी-छोटी नगरपालिकाओं और खण्ड-स्तर के सहकारी संघों के नामज़द सदस्य, (4) एक शामिल किया गया सदस्य, जो देहातों के विकास में विशेष रुचि रखता हो। पंचायत समिति का प्रधान सभी सदस्यों द्वारा समिति क्षेत्र से जिला परिषद के पदेन और सीधे निर्वाचित सदस्यों में से चुना जाएगा। लगभग एक हजार ताल्लुकों/खंडों में (जहां या तो अनुसूचित जातियों की आबादी कुल आबादी का 20 फीसदी हो अथवा जहां अनुसूचित आदिम जातियों का बहुमत हो) पंचायत समिति के प्रधान का पद उनके लिए रिज़र्व किया जा सकता है।

चुनाव

मण्डल पंचायत में निम्न श्रेणियों के सदस्य होंगे :—

(क) गांव तथा आबादी के आधार पर सीधे चुने गए 15 सदस्य;

(ख) किसान सेवा समितियों के प्रतिनिधि;

(ग) मण्डल पंचायत के चुनाव में सबसे ज्यादा वोट हासिल करने वाली दो महिलाएं (यदि किसी भी महिला ने चुनाव न लड़ा हो तो दो महिलाओं को शामिल किया जा सकता है)। मण्डल पंचायत का प्रधान सीधे निर्वाचित सदस्यों द्वारा अपने बीच से चुना जाएगा। लेकिन प्रधान को सीधे ही चुना जा सकता है पर इस सम्बन्ध में निश्चय राज्य खुद कर सकते हैं। मण्डल पंचायत में आबादी के आधार पर अनुसूचित जातियों/अनुसूचित आदिम जातियों के लिए सीटें रिज़र्व की जा सकती हैं। इस पंचायत में खालिस महिला सदस्यों वाली एक समिति बनाई जा सकती है। इसका लाभ यह होगा कि काम की पहल के बारे में महिलाएं स्वयं निर्णय कर सकेंगी और खासकर स्त्रियों और बच्चों के कल्याण और विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के बारे में मनपसन्द चयन कर सकेंगी।

ग्राम समितियों में निम्न श्रेणी के सदस्य होंगे :—

(1) सम्बद्ध चुनाव यूनिट से मण्डल पंचायत के लिए चुने गए सदस्य;

(2) सम्बद्ध चुनाव यूनिटों से जिला परिषद् के लिए चुने गए सदस्य;

(3) छोटे और सबसे छोटे किसानों के प्रतिनिधि / ग्राम-

समिति का प्रधान मण्डल पंचायत का वह सदस्य होगा जो सम्बन्धित गांव से चुना गया हो ।

सबसे नीचे के स्तरों पर लोकतन्त्र को गति प्रदान करने में ग्राम सभा को एक खास रोल अदा करना पड़ता है इसलिए उसे सच्चा प्रोत्साहन मिलना ही चाहिए । जिन ग्राम समितियों का सुझाव ऊपर दिया गया है, उन पर एक खास भार यह होगा कि उन्हें हर साल ग्राम सभा की दो बैठकें बुलानी होंगी । उन्हें लोगों को बताना होगा कि उनके क्षेत्र में मण्डल पंचायतें कौन-कौन से प्रोग्राम चला रही हैं और उन्हें मण्डल पंचायत को भी यह बताना होगा कि लोगों की जरूरत और राय इन प्रोग्रामों के बारे में क्या है ।

ग्राम-पंचायतों की तरह ही न्याय पंचायतों की स्थापना इसलिए की गई थी कि उनके द्वारा स्थानीय ग्राम स्तर पर न्याय की व्यवस्था की जा सके । न्याय पंचायत के काम के अच्छे और बुरे दोनों ही तरह के नतीजे निकले हैं । ज्यादातर मामलों में तो वे सुस्ती ही दिखाती रही हैं । अधिकारों को बांट कर न्याय की व्यवस्था के अपने गुण होते हैं लेकिन मौजूदा न्याय पंचायतों के कामकाज से लोग खुश नहीं हैं । समिति का विचार है कि न्याय पंचायतों को एक अलग इकाई के रूप में रखना चाहिए और उसे विकास पंचायतों के लिए चुने गए लोगों के साथ नहीं मानना चाहिए । विकास पंचायतों के सदस्यों के पास हुकूमत की ताकत होती है इसलिए ऐसा हो सकता है कि इन दो कामों को मिलाने से न्याय के बदले अन्याय होने लगे । हम तो इस पक्ष में हैं कि एक सुयोग्य जज को शामिल कर लिया जाए और वह अलग से चुने गए न्याय पंचों की एक सभा का प्रधान बने । जो न्याय पंच चुने जाएंगे, उन्हें दोबारा चुनाव लड़ने का हक नहीं होगा । उन्हें उस इलाके में कार्य नहीं करना चाहिए जिसमें कि वे चुने गए हों । उन्हें दूसरे इलाकों में सेवा करनी चाहिए ।

पंचायती राज के चुनाव राज्य के मुख्य चुनाव अधिकारी को कराने चाहिएं और उसे इसके लिए मुख्य चुनाव कमिश्नर से सलाह ले लेनी चाहिए ।

राज्य सरकार को द्वेष के आधार पर पंचायती राज संस्थाओं के अधिकार छीन कर उन्हें उखाड़ कर नहीं फेंकना चाहिए । अगर ऐसा करने की नौबत ही आ पड़े तो 6 महीने के भीतर एक निर्वाचित संस्था को उसकी जगह बिठा देना चाहिए । राज्य सरकारों को पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव को टालना नहीं चाहिए ।

यदि राजनैतिक दल पंचायती राज चुनाव में हिस्सा लेने लगेंगे तो इसके अच्छे नतीजे निकलेंगे । इससे विकास कार्यक्रम में एक नयापन आएगा और ऊंचे स्तर की राजनीतिक हलचल के साथ उसके स्वस्थ सम्बन्ध स्थापित हो सकेंगे । यदि कार्यक्रम के आधार पर सीधे चुनाव लड़े जाएंगे तो उससे कमजोर वर्गों को इस बात के और अधिक अवसर प्राप्त हो सकेंगे कि वे राजनैतिक व्यवस्था से प्राप्त अवसरों का लाभ उठा सकें ।

कामकाज

हर जगह की अपनी खास जरूरतें और मसले होते हैं । अतः स्थान विशेष को ध्यान में रखकर पंचायती राज संस्थाओं को कामकाज सौंपे जाते हैं । इस दृष्टि से एक अखिल भारतीय दृष्टिकोण से उनके कामकाज की कोई सब तरह से पूर्ण सूची देने का कोई खास अर्थ नहीं होगा । हर प्रदेश की विकास कार्यक्रम संबंधी पहल अलग-अलग होती है इसलिए यह जरूरी है कि राज्यों और संघराज्य क्षेत्रों को इस बात की पर्याप्त छूट मिले कि वे कामकाज सम्बन्धी पहल के बारे में अपनी अपनी सूची तैयार कर सकें । अधिकारों के प्रयोग में ज्यादा से ज्यादा लोगों को भागीदार बनाने के बारे में हमारा बुनियादी रुख यह है कि कामकाज और उसे चलाने वाली सीढ़ियों का एक निश्चित क्रम होना चाहिए, विकास की गति बहते हुए जल के समान होनी चाहिए और उसमें ठहराव नहीं होना चाहिए । इसलिए पंचायती राज संस्थाओं को जो कामकाज सौंपा जाएगा, उसमें समय समय पर हेरफेर करनी होगी ताकि वह वक्त की कसौटी पर खरा उतर सके लेकिन इसका मतलब यह कदापि नहीं हो सकता कि विकेन्द्रीकरण को राजनीतिक व्यवस्था का दान या प्रशासन व्यवस्था की छूट मान लिया जाए। यह तो वक्त का तकाजा है । यदि हमें सही मायने में विकास करना है तो ज्यादा से ज्यादा लोगों को उसमें भागीदार बनाना होगा। विकास कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे सरकार या कोई राजनीतिक दल सिर्फ अपने बूते पर कर सके । इसलिए पंचायती राज संस्थाओं के कामकाज को निश्चित करने में "गतिमान विकास" की अनदेखी नहीं की जा सकती । यदि इन संस्थाओं के कामकाज को कारगर तरीके से चलाना है तो राज्य सरकारों के पास इस बात के अलावा और कोई चारा नहीं होगा कि वे पर्याप्त मात्रा में शक्तियां और कार्यभार निचले स्तर को सौंप दें और स्थानीय स्तर पर उसकी जरूरत के लायक पैसे की व्यवस्था कर दें ।

उपरोक्त रुख को ध्यान में रखते हुए यह जरूरी होगा कि राज्य सरकार जिले से संबंधित जिन जिन विकास कार्यों का भार वहन कर रही है वह अब जिला परिषदों को सौंप दिया जाएगा । इस तरह जो कामकाज सौंपे जाएंगे उनमें से कुछ इस प्रकार हैं : खेती और उससे जुड़े हुए क्षेत्र, स्वास्थ्य, शिक्षा, संचार साधन, ग्रामोद्योग, हाट व्यवस्था, पिछड़े वर्गों की भलाई, परिवार की भलाई आदि । फिर भी इन मदों के कुछ अंश राज्य सरकार के पास रखने होंगे जैसे खेती संबंधी खोज, कालेज और यूनिवर्सिटी शिक्षा, मध्यम दर्जे की सिंचाई योजनाएं और जिले की सीमा से परे की टेढ़ी मद ।

हमने जिस नई स्कीम की बात सोची है, उसके अधीन विकेन्द्रीकरण जिले से शुरू होगा । जिले से निचले स्तर की हलचल हर राज्य की अपनी स्थिति पर निर्भर करेगी । मोटे तौर पर जिला परिषद उन सभी प्रोग्रामों को चलाएगी जो राज्य द्वारा उसे इस नई स्कीम के अधीन सौंपे जाएंगे और वही इन कार्यक्रमों के लिए योजनाएं तैयार करेगी । मण्डल पंचायत योजनाओं को अमल में लाने का दायित्व लेगी ।

यहां पर सहकारिता और शिक्षा का उल्लेख भी करना जरूरी होगा । सहकारिता को पंचायती राज संस्थाओं की झोली से तो बाहर रखना होगा पर शिक्षा को उसकी झोली में ही डालना होगा। हमारी राय है कि सहकारिता की मद जिला परिषद् के अधीन नहीं होनी चाहिए क्योंकि इससे निर्वाचित संस्थाओं के एक समूह को

दूसरे के अधीन रहना होगा। फिलहाल पंचायती राज संस्थाएं इतना ही करें कि अपने आप को सहकारिता आन्दोलन को आगे बढ़ाने और संगठित करने के काम में लगाएं। शिक्षा के बारे में हमारा विचार है कि इसे जिला परिषद् को इस शर्त पर सौंपा जा सकता है कि तबादलों और नियुक्तियों की देखभाल के लिए अलग से एक समिति बनाई जाए। हमारे विचार में यदि स्थानीय संस्थाएं देखभाल करेंगी तो उससे न सिर्फ मास्टरों की हाजिरी की दशा में सुधार होगा बल्कि ऐसा भी ख्याल है कि जो लोग पढ़ाई से जी चुराकर स्कूल नहीं जाते हैं उनकी संख्या भी कम होगी। प्रौढ़ शिक्षा के प्रोग्राम भी तेजी से चलने लगेंगे।

पंचायती राज संस्थाओं को विकास कार्य की जिम्मेदारी सौंपना तभी सार्थक होगा जब उन्हें इस बात की पूरी पूरी छूट दे दी जाएगी कि वे अपने फैसले खुद ही कर सकें और अपनी जरूरतों के अनुसार योजनाएं बना सकें। इस तरह योजना तैयार करना जिला परिषदों का एक खास दायित्व होगा।

मण्डल पंचायतों के कामकाज को भी एक नए अन्दाज से देखना होगा। उन पर जिला परिषद् द्वारा सौंपी गई योजनाओं को अमल में लाने का भार होगा जिनकी संख्या एक दो न होकर अनेक भी हो सकती हैं। उनकी भूमिका यह होगी कि सामुदायिक काम को गति प्रदान करने में सहयोग दें और संगठन खड़ा करें। वे उन कामों को तो करती ही रहेंगी जो अलग अलग नियमों के अधीन उन्हें करने होते हैं। नगरपालन और भलाई के कामों के लिए उन्हें पहले से बड़ा रोल अदा करना होगा। आमतौर पर तो मण्डल पंचायतों को क्षेत्रीय स्तर की चालू परियोजनाओं का प्रबन्ध चलाना है, उनमें तालमल रखना है और उनकी देखभाल के लिए संस्था की व्यवस्था करनी है।

पंचायती राज संस्थाएं आम तौर पर और मण्डल पंचायत खास तौर पर नगर पालन और कल्याण कार्यों के क्षेत्र में एक अहं रौल अदा कर सकती हैं। वे इस सम्बन्ध में योजना के लिए राज्य द्वारा किए जाने वाले खर्च की कमी को पूरा कर सकती हैं। इनमें से बहुत सी जरूरतें तो इतनी स्थानीय होती हैं कि कम से कम जरूरतों वाले संशोधित प्रोग्राम जैसे बड़े प्रोग्राम द्वारा भी पूरी नहीं की जा सकतीं लेकिन मण्डल पंचायतों का तो इनसे बहुत ही निकट का संबंध होता है।

विकास कार्यों और उनम होने वाले परिवर्तनों की तेज गति को देखते हुए कुछ कामों की बागडोर तो आगे भी कलक्टर के हाथ में रखी जा सकती है लेकिन जिन कामों का संबंध विभिन्न विकास कार्यक्रमों के परिपालन से है वे पंचायती राज की समुचित इकाई को सौंपी जानी चाहिए। इसके अलावा, मालगुजारी विभाग को पुनः इस तरह संगठित किया जाना चाहिए कि उससे पंचायती राज संस्थाओं के काम को बढ़ावा मिल सके और उसमें आसानी हो सके।

पंचायती राज संस्थाओं को नियंत्रण की शक्तियां सौंपने पर उस समय फिर विचार कर लिया जाना चाहिए जब जिला परिषदों का काम अच्छी तरह जम जाए और वे प्राप्त साधनों के बल पर अपनी योजना खुद बनाकर उस पर अमल करा सकें।

मण्डल पंचायतों को विकास केन्द्रों से भली-भांति जोड़ना होगा। उन्हें इस क्षेत्र के अन्य संगठनों के साथ मिलकर हाट व्यवस्था, जरूरी चीजों की सप्लाई, कर्ज, मरम्मत और कल्याण संबंधी जरूरतों के बारे में आवश्यक निर्णय करने होंगे। आगे चलकर मण्डल पंचायतों को योजना को अमल में लाने के काम के लिए बुनियादी स्तर के संगठन का रूप लेना होगा। अतः उन्हें न केवल खण्ड का काम सभालना होगा बल्कि उच्च स्तर की खास तकनीकी जानकारी निचले स्तर पर उपलब्ध करानी होगी।

योजना

चूंकि आर्थिक योजना तैयार करने के लिए जिला महत्वपूर्ण स्तर होगा इसलिए जिला परिषद् को जिला स्तर पर योजना तैयार करने का भार सौंपा जाना चाहिए। जिला स्तर पर ही यह निश्चित किया जा सकता है कि कुल साधन क्या होंगे, कितना ऋण उपलब्ध होगा और कौन सी नीति अपनाना जरूरी होगा। चुनी हुई जिला परिषद् तकनीकी एवं आर्थिक योजनाओं में जरूरी संशोधनों का सुझाव भी दे सकेगी। खण्ड स्तर पर तैयार किए गए पैदावार और रोजगार सम्बन्धी प्रोग्राम योजना की बड़ी चौखट में अच्छी तरह फिट हो सकेंगे। जिला योजनाओं को तैयार करने के लिए जिला स्तर पर धन्धों में पारंगत लोगों की एक टीम तैनात की जानी चाहिए। इस ग्रुप का गठन वैसा ही होगा जैसा कि खण्ड स्तर योजना के जानकार दल द्वारा सुझाया जाए। योजना को तैयार करते समय जिला स्तर के खास जानकारों को जिले से संबंधित सभी प्रकार के जनमत को ध्यान में रखना चाहिए। राज्य सरकार को जिला स्तर की योजना बनाने के काम में बराबर मदद देनी होगी। उसे इस बात की तसल्ली कर लेनी होगी कि कमजोर वर्ग के बारे में राष्ट्रीय उद्देश्यों का पालन पंचायती राज संस्थाएं अवश्य ही करें। उसे यह भी देखना होगा कि साधनों का उचित बंटवारा हो और लम्बे अर्से तक के लिए पूर्वताएं निश्चित हों।

तकनीकी दल द्वारा तैयार की गई जिला योजना जिला परिषद् की "समूची कमेटी" के सामने रखी जाएगी जिसमें संसद् सदस्य, विधान सभा सदस्य और विधान परिषद् सदस्य भी होते हैं। राज्य सरकार को जिला योजनाओं पर बिचार करने के लिए जरूरी मशीनरी का प्रबन्ध करना चाहिए ताकि राज्य की योजनाएं बनाने में मदद मिल सके। उसे इस संबंध में जिला परिषदों से भी लिखापढ़ी करनी चाहिए। जिले की योजना बनाते समय शहरों और देहातों के संबंधों के संचलन का भी ध्यान रखना चाहिए। जिला योजना को बनाते समय विकास संबंधी आंकड़ों की बारीकी से जांच की जानी चाहिए ताकि जरूरत के अनुसार धन का प्रबन्ध किया जा सके। योजना इस तरह बनाई जानी चाहिए कि कमजोर वर्गों के लिए अलग से जुटाए गए साधनों से उत्पन्न नए अवसरों का ठोस लाभ इन वर्गों को मिल सके। इस संबंध में जिला सामाजिक न्याय समितियां काफी सहायक सिद्ध होंगी। जिले की योजना बनाते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि ठोस योजनाएं बनें और थोड़े समय की ऐसी योजना बनाएं जिनसे गरीबी से पिसने वाले क्षेत्रों और कमजोर एवं पिछड़े वर्गों को राहत मिल सके।

फिलहाल कुछ जिले इतने बड़े हैं कि सुगठित योजनाएं बनाना आसान नहीं है। बढ़िया गठन भी जरूरी है, बढ़िया असर भी जरूरी है, ठीक और सही आकार भी जरूरी है। इन सब बातों और जिला परिषद् के प्रतिनिधियों की संख्या को ध्यान में रखते हुए यह वांछनीय है कि छोटे-छोटे जिले हों।

शुरू में मण्डल पंचायतें केवल परिपालन और प्रोत्साहन देने भर का काम कर सकती हैं। लेकिन आगे चलकर उन्हें एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी होगी। उन्हें विभिन्न योजनाओं के बारे में जरूरी सूचना सप्लाई करनी होगी और जिला परिषद् को बताना होगा कि किन किन इलाकों में विकास की गुंजाइश है और उनके लिए कितनी और किन-किन चीजों की जरूरत होगी। उन्हें यह भूमिका लगातार अदा करनी होगी। केवल मसौदे पर विचार के लिए बैठक बुलाने अथवा उस पर जिला परिषद् को अपनी राय दे देने से काम नहीं चलेगा। समय-समय पर मण्डल पंचायतें जो विचार प्रकट करेंगी, उन पर जिला स्तर की योजना यूनिट को ध्यान देना होगा।

आशा है कि आने वाले वर्षों में कृषि विकास के लिए और अधिक मात्रा में कर्ज मिल सकेगा इसलिए पंचायती राज संस्थाओं को बजट से प्राप्त होने वाले साधनों के बजाय संस्था से प्राप्त होने वाले साधनों पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। यह तभी संभव हो सकेगा जब पंचायती राज संस्थाएं परियोजनाओं को पूरा करने में और अधिक सहयोग प्राप्त करने की ओर ध्यान दें और परियोजनाओं का लाभ उठाने वालों के विचार जानने की कोशिश करें। इनमें लोगों के सहयोग की काफी जरूरत है जैसा कि न्यूनतम जरूरतों वाले संशोधित कार्यक्रम के अनुभव से सिद्ध हो चुका है। पंचायती राज संस्थाओं को सिर्फ जनता के के प्रतिनिधियों के विचार मात्र प्राप्त कर लेने से ही संतोष नहीं कर लेना चाहिए। उन्हें अपने आप को इस बात के लिए तैयार कर लेना चाहिए कि वे प्राप्त साधनों के भीतर ही योजनाएं बना सकें।

कमजोर वर्ग

देहातों के गरीब लोगों में से अधिकांश लोग अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के हैं। सरकारी नीति के मार्गदर्शी सिद्धान्तों में उनके कल्याण की कामना की गई है और इस सम्बन्ध में बहुत से विकास कार्यक्रम चालू भी किए जा चुके हैं। पंचायती राज संस्थाएं समाज के कमजोर वर्गों को लाभ पहुंचाने में असफल रही हैं। इसका कारण यह भी रहा है कि इन संस्थाओं के ढांचे का खांचा ही छोटा रहा है। हम इस बारे में चिंतित हैं कि उचित ढांचे और कार्यक्रमों की व्यवस्था की जाए ताकि कमजोर वर्ग पर्याप्त मात्रा में देश के योजनाबद्ध विकास का लाभ उठा सकें। अनेक उपायों द्वारा पंचायती राज्य संस्थाओं की विकास क्षमता के बारे में उनका मन जीता जा सकता है और संस्थाओं को चलाने में उनका सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। संख्या के अनुपात में उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व हो सके, इसके लिए हम निम्न उपायों की सिफारिश करना चाहेंगे : (1) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के प्रति न्याय करने के लिए यह जरूरी है कि सभी पंचायती राज संस्थाओं में उनका प्रतिनिधित्व उनकी आबादी के आधार पर हो, (2) 666 ताल्लुकों/खण्डों में जहां अनुसूचित जातियों की आबादी 20 प्रतिशत से अधिक है और 329 ताल्लुकों/खण्डों में जहां अनुसूचित आदिम जातियों की आबादी सबसे ज्यादा है, पदों के लिए रिजवर्शन का सिद्धान्त लागू किया जाना चाहिए (3) रिजवर्शन पद्धति को सामाजिक न्याय समितियों की स्थापना से सबल किया जा सकता है जिनका प्रधान सिर्फ अनुसूचित जातियों/अनुसूचित आदिम जातियों के लोगों में से होना चाहिए (4) कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा के उद्देश्य को राजनीतिक सहारा देने के लिए विधान-मण्डल की एक कमेटी बनाई जाए जिसमें, जहां तक सम्भव हो सके, अनुसूचित जातियों/अनुसूचित आदिम जातियों के विधान सभा सदस्यों/विधान परिषद् सदस्यों का बहुमत हो। कमेटी ही इन समुदायों के प्रोग्रामों के काम की जांच करे। यह कमेटी अनुसूचित जातियों/अनुसूचित आदिम जातियों के लिए अलग से निश्चित रकम की सामाजिक लेखा परीक्षा भी करेगी।

यह निश्चय करने के लिए कि समाज के कमजोर वर्गों को विभिन्न योजनाओं का ज्यादा से ज्यादा लाभ मिले, हम यह सुझाव देना चाहेंगे कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लिए अलग से बनाए गए प्रोग्रामों और अलग से रखी गई रकमों की "सामाजिक लेखा-परीक्षा" करने के लिए एक स्वतन्त्र अधिकार वाली संस्था होनी चाहिए। हम यह निश्चय भी करना चाहेंगे कि उनके लिए बनाई गई योजनाओं पर इस तरह अमल किया जाए कि वांछित प्रभाव में कमी न आने पाए। शुरू में तो मौजूदा लेखा-परीक्षा विभाग में ही एक अलग शाखा खोल दी जाए और कलक्टर पर इस बात का भार डाल दिया जाए कि वह सरकार के वास्ते सामाजिक लेखा-परीक्षा के लिए जरूरी आंकड़े जुटाए।

काम धन्धों को बढ़ाने वाले विकास कार्यक्रमों का अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों से गहरा सम्बन्ध है। अतः पंचायती राज संस्थाओं को इस बात के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए कि वे देहाती इलाकों में डेरी खोलने, मुर्गी आदि पालने, पशु पालने या मछली पालने जैसे क्षेत्रों में अपना हाथ लगाएं।

पंचायती राज संस्थाएं जन-संस्थाएं हैं। वे अनुसूचित जातियों/अनुसूचित आदिम जातियों संबंधी वित्त/विकास कारपोरेशनों को क्षेत्रीय स्तर का सहारा दे सकती हैं।

ये कारपोरेशन कुछ राज्यों में चालू हैं और जहां चालू नहीं हैं, वहां इनकी स्थापना की जानी चाहिए। ये कारपोरेशन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लिए खास तौर पर बनाए गए विभिन्न कार्यक्रमों के लिए पैसे के अलावा तकनीकी मदद देते हैं।

राज्य सरकार की यह खास जिम्मेदारी होनी चाहिए कि वह लाभप्रद प्रशासनिक उपायों के द्वारा, जिसमें सुरक्षा प्रदान करने वाले और विकास करने वाले उपाय शामिल हैं, यह निश्चय करे

कि नई तकनीकी जानकारी का सन्तुलन बना रहे, ऋण-योग्य कार्यक्रमों के लिए समाज के गरीब वर्गों को ऋण मिल सके और उनके हुनर बराबर फलते-फूलते रहें। पंचायतों और पंचायत समितियों के पास अब भी ऐसे अनेक साधन हैं जिनका पूरा-पूरा उपयोग समाज के गरीब वर्गों के हित में नहीं किया जा रहा है। कहीं-कहीं तो गांव के कुछ दबंग लोगों ने इन साधनों को हड़प लिया है। राज्य सरकारों को बेदखली के लिए जरूरी कार्यवाही करानी चाहिए और इस बात के लिए एक जोरदार आन्दोलन चलाना चाहिए कि ये संसाधन फिर से पंचायती राज संस्थाओं को लौटा दिए जाएं। यह भी जरूरी है कि पंचायती राज संस्थाओं को नियन्त्रण की ऐसी शक्तियां भी दी जाएं जिनसे वे अपने विकास कार्य को सही ढंग से चला सकें।

बहुत से ऐसे सामुदायिक साधन हैं जिनका अभी तक उपयोग नहीं किया गया है अथवा उपयोग करने में रुचि नहीं दिखायी गयी है। उनको लेकर कमजोर वर्गों के लाभ के लिए अनेक विकास कार्यक्रम चलाए जा सकते हैं। हम इस सिलसिले में सामूहिक फार्म जंगल लगाने और खारे पानी में मछली पालन की खास तौर पर चर्चा करना चाहेंगे। खारे पानी में मछली और झींगा मछली के साथ-साथ पालन से भी काफी पैसा पैदा किया जा सकता है और हमारा विचार है कि इसका लाभ समाज के कमजोर वर्गों को मिलना ही चाहिए। सुरक्षित वनों और गांव और सुरक्षित वनों के बीच के क्षेत्रों का, जो खाली पड़े रहते हैं, वैज्ञानिक तरीके से उपयोग किया जाना चाहिए और वहां भूमि-हीन श्रमिकों को बसाया जाना चाहिए। ये स्थान पशु पालन के लिए भी उपयुक्त हैं। राज्य सरकारों पर एक खास दायित्व यह डाला जाना चाहिए कि वे गरीब परिवारों के लिए ऐसी भूमि और जल साधनों के विकास हेतु एक समयबद्ध कार्यक्रम तैयार कराए।

इन कार्यक्रमों को पंचायती राज संस्थाओं की मार्फत चलाया जाना चाहिए और इनकी देखभाल सामाजिक लेखा परीक्षा एजेंसियों, सामाजिक न्याय समिति और विधानमण्डल की कमेटी द्वारा की जानी चाहिए।

प्रशासन

हम पंचायती राज संस्थाओं की प्रबन्ध व्यवस्था को नया रूप देना चाहेंगे। इस सम्बन्ध में हमारा बुनियादी रुख यह है कि प्रशासन को राजनीतिक व्यवस्था के अनुरूप होना चाहिए। जब राज्य सरकार के कामकाज निचले स्तर को सौंप दिए जाएंगे तो सभी संबंधित जिला स्तर के अधिकारी, जिला परिषदों और उससे नीचे की इकाइयों के अधीन रखे जाएंगे। इस प्रकार एक मिले-जुले जिला परिषद् सचिवालय के साथ-साथ विकेन्द्रित आधार पर चलने वाला एक अलग विकास प्रशासन विकसित होगा। विकास कार्यक्रमों की देखभाल और राह सुझाने के लिए निर्वाचित संगठन का गठन मौजूदा प्रशासन के ढर्रे में निश्चय ही उथल पुथल मचाएगा लेकिन इस परिवर्तन के रास्ते में आने वाली प्रबन्ध, कर्मचारियों और व्यक्तिगत समंजन संबंधी समस्याओं की परवाह नहीं की जानी चाहिए। प्रबन्ध ढांचे को स्वयं को इस बुनियादी फेरबदल के अनुरूप ढालना होगा।

महाराष्ट्र और गुजरात को तरक्की, वेतन और अन्य उपलब्धियों और सेवा की शर्तों में एकरूपता बनाए रखने के सम्बन्ध में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा था। सरसरी तौर पर देखा जाए तो प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी के सभी गजेटेड कर्मचारियों को राज्य सरकार के केडर में चलने देना चाहिए और तृतीय श्रेणी और चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों को पूरी तरह पंचायती राज संस्थाओं को सौंपा जाना चाहिए। इस बात के लिए समुचित व्यवस्था होनी चाहिए कि राज्य स्तर के अधिकारियों और जिला परिषदों के अधीन काम करने वाले प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी के कर्मचारियों की आपस में अदला बदली की जा सकती है। जिला परिषद् के कर्मचारियों की भरती राज्य और जिला स्तर के स्वतन्त्र बोर्डों द्वारा की जा सकती है। जिला परिषद् के अधीन सभी विकास कर्मचारियों को जिला परिषद् के मुख्य कार्यपालक अधिकारी जैसे अधिकारी के अधीन रख देना चाहिए। मुख्य कार्यपालक अधिकारी अन्य जिला अध्यक्षों के साथ तालमेल रखेगा जो जिला परिषद् की संबंधित विषय समितियों के सेक्रेटरी होंगे। कमेटियों की बैठकों में कार्य-पालक अधिकारी आमंत्रित व्यक्ति होगा।

जिला परिषद् नीति निर्धारण का काम करेगी। ऐसा करते समय वह कमेटियों द्वारा किए गए किन्हीं खास फैसलों को ध्यान में रखेगी लकिन अमल संबंधी समूचे कार्य की खास जिम्मेदारी मुख्य कार्यपालक अधिकारी पर होगी। विकास सबधी कार्य-पालक अधिकारी काफी ऊंची श्रेणी का व्यक्ति होना चाहिए। अतः उसी व्यक्ति को मुख्य कार्यपालक अधिकारी के रूप में तैनात किया जाना चाहिए जिसने तीन वर्ष या उससे अधिक समय तक किसी जिले का कार्यभार सफलतापूर्वक चलाया हो।

यह स्वाभाविक है कि कुछ अस्थायी समस्याएं आएंगी। इनका सम्बन्ध खास तौर से कर्मचारियों, विभाजन की समस्याओं और समूचे जिला कर्मचारियों का राज्य और जिले के केडरों में तबादलों से होगा। जिला स्तर के कामकाज को पंचायती राज संस्थाओं को सौंप दिए जाने के बाद भी राज्य सरकार के पास जिला स्तर के कुछ कर्मचारी काम चलाने के लिए बने रहेंगे लेकिन कर्मचारियों का दोहरापन केवल राज्य के कामकाज तक सीमित रहेगा जिसका निश्चय जिला परिषद् को शक्तियां सौंपते समय कर दिया जाएगा। कलैक्टर नियंत्रण और मालगुजारी संबंधी और राज्य सरकार द्वारा सौंपे गए दूसरे काम करता रहेगा और "सामाजिक लेखा परीक्षा" में मदद देता रहेगा। जब नियमन संबंधी राज्य के कुछ कामकाज जिला परिषद् को सौंपे जाने का प्रश्न उठेगा, उस समय कलैक्टर के रोल पर पुनः विचार करना पड़ेगा।

मण्डल पंचायत विकास के साथ साथ नगरपालन और भलाई के कामकाज की देखभाल करती रहेगी। इसलिए उसके लिए पार्ट-टाइम असिस्टेंट के बजाए एक पूरे समय के पंचायत कार्य-पालक अधिकारी की व्यवस्था सम्भव हो सकेगी। उसका वेतन आदि ऐसा होना चाहिए कि काफी योग्य कर्मचारी उस पर आने के लिए उत्सुक हों। क्षेत्रीय स्तर में विभिन्न विकास विभागों के काफी कर्मचारी हैं, जैसे कृषि विस्तार अधिकारी, मछली

पालन विस्तार असिस्टेन्ट, व्यावारिक फसल विस्तार कार्यकर्त्ता, लघु उद्योग संवर्द्धन अधिकारी और स्वास्थ्य उपकेन्द्र कर्मचारी आदि। ये सब कर्मचारी आगे चलकर मण्डल पंचायत के स्तर पर चले जाने चाहिएं।

जहां तक तकनीकी कर्मचारियों का सम्बन्ध है, उनकी लाइन बनी रहेगी। जिला परिषद् में ये कर्मचारी अपने वरिष्ट अधिकारियों के अधीन रहेंगे और तकनीकी मामलों पर सलाह देते रहेंगे ताकि तकनीकी लाइन पर नियन्त्रण बना रहे लेकिन प्रशासन के मामले में वे मुख्य कार्यपालक अधिकारी के अधीन रहेंगे। जिला स्तर के तकनीकी कर्मचारियों के चरित्र का गोपनीय विवरण मुख्य कार्यपालक अधिकारी द्वारा लिखा जाएगा जिस पर संबंधित विभाग के अध्यक्ष द्वारा प्रति हस्ताक्षर किए जा सकते हैं। विकास कार्य बढ़ते जा रहे हैं और प्रतिदिन उनमें टेढ़ापन आता जा रहा है। अतः यह जरूरी है कि विकास संबंधी जरूरतों पर बराबर ध्यान रखा जाए और पंचायती राज संस्थाओं की देखभाल करने वाले राज्य स्तर के विभागों के ढांचे और कार्य के तरीके बदले जाएं। पंचायती राज के लिए एक मंत्री होना चाहिए जिसके खास दायित्व इस प्रकार होंगे :--

(क) पंचायती राज संबंधी कानून बनाना ;

(ख) पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव ;

(ग) निर्वाचित पदाधिकारियों और कार्यपालक अधिकारियों की ट्रेनिंग और समूचे पंचायती राज ढर्रे के लिए सभी ट्रेनिंग केन्द्रों का प्रबन्ध ;

(घ) पंचायती राज के हिसाब-किताब के लेखे-जोखे की सुघड़ व्यवस्था ;

(ङ) राज्य विधान मण्डल को रिपोर्ट देने के लिए पंचायती राज के कामकाज की समीक्षा ;

(च) पंचायती राज के निर्वाचित सदस्यों के शिविर प्रशिक्षण की और सुन्दर व्यवस्था।

रोजमर्रा के प्रशासन कार्य के लिए विकास कमिश्नर के अधीन पंचायती राज निदेशालय और मन्त्रिवालय विभाग जरूरी होगा लेकिन पंचायती राज संस्थाओं के काम को सफल बनाने में सभी विकास विभागों का हाथ होगा।

चूंकि एक नई प्रशासन पद्धति का उदय होगा इसलिए राज्य के प्रधान कार्यालयों के विभाग अध्यक्ष जिलों का दौरा करते समय जिला परिषद् के प्रधान से मिल सकते हैं और उसे दौरे की खास खास बातों की जानकारी करा सकते हैं। जिला परिषद् के प्रधान को भी राज्य स्तर के विभिन्न डाइरेक्टरों से संपर्क रखना चाहिए, ताकि और अच्छी व्यवस्था वाला डिलीवरी सिस्टम बन सके। पंचायती राज कानून इस तरह बनाया जाए कि पूर्ण शक्तियां आसानी से सौंपी जा सकें। इस सम्बन्ध में राज्य स्तर के मंत्रिपरिषद् की जिम्मेदारी का एक खासा महत्व है क्योंकि विधान मण्डल की दो कमेटियां पंचायती राज संस्थाओं के पूरे कामकाज की देखभाल करती रहेंगी। राज्य सरकार को इस बात का भी प्रबन्ध करना चाहिए कि शिक्षा संस्थाओं समेत स्वतन्त्र एजेन्सियों द्वारा पंचायती राज संस्थाओं का निष्पक्ष मूल्यांकन होता रहे। विश्वविद्यालय इस कार्य में एक खास भूमिका अदा करेंगे।

भारत सरकार का भी एक खास दायित्व यह है कि उसे ग्राम स्तर पर लोकतन्त्र पद्धति की विकास व्यवस्था को मजबूत बनाना है। उसे यह निश्चय करना है कि जिला स्तर के विकास कार्यक्रमों में पंचायती राज संस्थाओं की अनदेखी तो नहीं होती। ट्रेनिंग की सुविधाएं बढ़ाने जैसे जो सुझाव हमने दिए हैं, उनके अनुसार केन्द्र को एक ठोस भूमिका अदा करनी होगी।

9. वित्तीय साधन

इस बात को बारीकी से निरखा और परखा गया है कि विभिन्न मार्गों से होकर पंचायती राज्य संस्थाओं के पास जो धन आता है, उसकी वर्तमान स्थिति क्या है। इस बात की संभावना प्रकट की गई है कि साधनों में वृद्धि करने के लिए अन्य राज्यों के तरीकों का या तो अनुकरण किया जाए अथवा उन्हें बेहतर बनाया जाए। यह तरीका कुछ समय तक चल सकता है लेकिन इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि वित्तीय अधिकार निचले स्तर को सौंपने के प्रस्ताव में किसी परम्परागत रीति का सहारा नहीं लिया जाना चाहिए बल्कि होना तो यह चाहिए कि गतिशील विकास की सहज जरूरतों को ध्यान में रखते हुए उन्हें तैयार किया जाए। जाहिर है कि हमें जिला स्तर पर विकास का काफी कार्यभार सौंपना होगा। इस कार्य को पूरा करने में मण्डल पंचायत एक खास रोल अदा करेगी। राज्य सरकार के बजट से तो पैसा मिलेगा ही लेकिन पंचायती राज संस्थाओं को भी अपने निजी साधन जुटाने चाहिए। कोई भी लोकतन्त्र पद्धति वाली संस्था बाह्य साधनों पर निर्भर करते हुए अपनी संचालन संबंधी आत्मनिर्भरता बनाए नहीं रख सकती। अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए सभी पंचायती राज संस्थाओं को टैक्स लगाने की अनिवार्य शक्ति दी जानी चाहिए। टैक्स लगाने की शक्ति के बारे में एक खास सूची पंचायती राज संस्थाओं को दी जानी चाहिए और उनमें से कुछ को अनिवार्य बना देना चाहिए। सभी राज्यों के लिए एक स्टैन्डर्ड सूची देना तो सम्भव नहीं है लेकिन गृहकर, व्यवसाय कर, मनोरंजन कर और भूमि तथा भवन संबंधी विशेष कर जैसे कुछ ऐसे टैक्स हैं जिन्हें पंचायती राज संस्थाएं उचित स्तर पर अनिवार्य रूप से लगा सकती हैं।

पंचायती राज संस्थाओं को दी जाने वाली टैक्स लगाने की शक्तियां नपी तुली होनी चाहिएं और उनकी स्पष्ट व्याख्या होनी चाहिए। कतिपय ऐसे पेशे और धन्धे हैं जिनमें ज्यादातर कमजोर वर्गों के लोग लगे हुए हैं। उन्हें कानूनी तौर पर इन टैक्सों से छुटकारा मिलना चाहिए ताकि सामाजिक न्याय का बोलबाला हो सके।

टैक्सों के अलावा पंचायती राज संस्थाओं को शुल्क/टैक्स कुछ सेवाओं के लिए लगाने चाहिएं, जैसे बिजली, सफाई, पानी आदि की सेवा। इन शुल्कों की कम से कम और ज्यादा से ज्यादा हद निश्चित कर दी जानी चाहिए ताकि मनमानी वृत्ति या विषमता को टाला जा सके। फिलहाल मालगुजारी पर उपकर, पानी पर उपकर, स्टैम्प ड्यूटी पर सरचार्ज, मनोरंजन,

कर और प्रवेश कर आदि पंचायती राज संस्थाओं के हवाले कर दिए जाने चाहिए। मण्डल पंचायतों को उसका अधिक भाग मिलना चाहिए। स्थानीय पहल को प्रेरित करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं को यह कानूनी हक दिया जाना चाहिए कि वे राज्य सरकार से उपकरों में, वृद्धि के लिए प्रार्थना कर सकती हैं। इस सिलसिले में हम यह सिफारिश करते हैं कि अन्य टैक्सों की बहुलता को ध्यान में रखते हुए पांच वर्ष के भीतर धीरे-धीरे पंचायती संस्थाओं को मालगुजारी की मद पूर्ण रूप से सौंप दी जानी चाहिए।

फैलते हुए देहात विकास कार्यक्रम में चारागाहों, रिजर्व न किए गए जंगलों, बगीचों, सार्वजनिक जमीनों, मवेशियों, के पोखरों, मछली वाले तालों, नौ-घाटों, खदानों जैसी सार्वजनिक सम्पत्ति के तबादले का बड़ा महत्व होगा। जहां उन्हें कानूनी तौर पर मण्डल पंचायत को नहीं सौंपा गया है वहां ऐसा किया जाना चाहिए। मण्डल पंचायत को उस दिशा में कोशिश करनी होगी कि इन साधनों से अधिक लाभ प्राप्त हो सके। मण्डियां, हाट, पैंठ और मेले आदि मालगुजारी प्राप्त करने के बहुत बढ़िया साधन सिद्ध होंगे। इनका विकास होना चाहिए और इनका कंट्रोल भी पंचायती राज संस्थानों के हाथ में होना चाहिए।

मण्डल पंचायतें काफी बड़ी आबादी वाले क्षेत्र की देख-भाल करेंगी। इस क्षेत्र में कई मण्डियां होंगी। अतः मण्डल पंचायत अनेक प्रकार के साधनों का लाभ उठाने के लिए और अधिक गहराई और लोच के साथ कोशिश कर सकेंगी। माल-गुजारी देने वाले इन साधनों का विकास सरकारी मदद और सहकारी समितियों से मिलने वाले पैसे से किया जाना चाहिए। एसे साधन ज्यादातर तो मण्डल पंचायतों के पास रहेंगे लेकिन साधन के आकार को ध्यान में रखते हुए वे जिला परिषद् को भी सौंपे जा सकते हैं। अगर राज्य सरकार अपने बजट में कम ब्याज अथवा ब्याज रहित सहायता दे और उसमें सहकारी समितियों की मदद को भी शामिल कर लिया जाए तो उस पंचायती राज संस्थानों को काफी गहरा सहारा मिल जाएगा और वे लाभकारी उद्योगों की स्थापना के अपने लक्ष्य की ओर बढ़ती चली जाएगी।

मण्डल पंचायतें अपने टैक्स तो लगाएगी ही पर जैसा कि बताया जा चुका है, उन्हें बहुत से अन्य टैक्स लगाने की शक्ति दिए जाने की संभावना है। इसके अलावा उन्हें 2.50 रु० प्रति व्यक्ति से अन्यून स्थायी वार्षिक अनुदान भी मिलना चाहिए। चूंकि टैक्स लगाने की शक्ति को टैक्स वसूल करने की जिम्मेदारी से अलग नहीं करना चाहिए अतः पंचायती राज संस्थाओं के कर्मचारियों को खुद ही टैक्स वसूल करना चाहिए। संतानम टीम के सुझाव के अनुसार पटवारी और सैक्रेटरी का गठजोड़ करना ठीक नहीं होगा। चकबंदी करते समय इस बात का खास तौर पर ध्यान रखा जाना चाहिए कि सामूहिक प्रयोजनों के लिए अलग से जगह छोड़ी जाए। ये जगहें मण्डल पंचायतों को सौंपी जानी चाहिए। मण्डल पंचायत खर्च में कमी कर सकती हैं। उन्हें थोड़े समय के या पूरे समय के कम वेतन वाले बहुत से सेक्रेटरी रखने की बजाय अच्छे वेतन पर एक ही सैक्रेटरी रखना चाहिए जो टैक्स की वसूली के काम की देखभाल कर सके और मण्डल पंचायतों द्वारा सौंपे गए अन्य कार्यों की देखभाल की जिम्मेदारी भी ले सके। मालगुजारी वसूल करने का काम संबंधित पंचायतों की मर्जी पर छोड़ दिया जाना चाहिए लेकिन जो मण्डल पंचायतें मालगुजारी वसूल करती हों, उन्हें नतीजों के अनुरूप कमीशन दिया जाना चाहिए ताकि उन्हे भीतरी प्रेरणा मिलती रहे। जब मण्डल पंचायत पूरे जोर शोर से काम करने लगेगी तब स्थिति पर पुनः विचार किया जा सकता है।

जब जिला स्तर पर योजना परिपालन संबंधी समूचे काम-काज जिला परिषद् को सौंपे जाएंगे तो उस समय योजनाओं के साथ साथ वित्त सौंपने का प्रश्न भी उठेगा। परियोजनाओं/योजना निधियों का बंटवारा इस तरह करना होगा कि जिलों को तो वे बराबर बराबर मिले लेकिन पिछड़े इलाकों को ज्यादा मिलें। जिला अथवा उससे निचले स्तरों पर किया जाने वाला योजना से इतर खर्च भी संबंधित इकाइयों की मार्फत होना चाहिए क्योंकि ऐसा करना मिले-जुले विकास कार्य के लिए लाभप्रद होगा और उस पंचायती राज संस्थाओं की योग्यता एवं क्षमता बढ़ेगी। राज्य वित्त आयोग की नियुक्ति से कोई लाभ प्रतीत नहीं होता।

पंचायती राज वित्त निगम जैसी नई संस्था खड़ी करने का कोई लाभ नहीं होगा। उससे ऋण प्राप्त करने में कोई खास मदद नहीं मिलेगी। आज जरूरत इस बात की है कि सभी वित्तीय संस्थाओं का रूख देहातों की ओर मोड़ा जाए ताकि देहातों को और अधिक मात्रा मे ऋण मिल सके।

पंचायतीराज संस्थाओं को बजट तैयार करने का सरल तरीका ही अपनाना चाहिए। राज्य सरकारों को भी बजट का ऐसा तरीका अपनाना होगा जो बताएगा कि विभिन्न प्रकार की कौनसी मदें पंचायती राज संस्थाओं को सौंपी जाएंगी। प्रत्येक राज्य सरकार स्थानीय हालातों को ध्यान में रखते हुए ऐसे मार्गदर्शी सिद्धान्त तैयार कर सकती है जिनका उपयोग उनके अधिकारी और पंचायती राज संस्थाएं बजट बनाने और उसे मंजूरी देने के काम में ला सकती हैं। बजट तैयार करते समय इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि कमजोर वर्गों की परियोजनाओं के लिए काफी पैसा अलग से रखा जाए।

यह एक उचित प्रथा दीख पड़ती है कि बजट की मंजूरी एक ऊंचे अधिकारी द्वारा दी जाए क्योंकि इस पंचायती राज के उंचे स्तरों को इस बात की जानकारी मिलती रहती है कि निचले स्तरों पर क्या हो रहा है। वे ऐसे पैसे के उपयोग के लिए बेहतर सुझाव भी दे सकते हैं। जिला स्तर पर एक काफी ऊंचे वित्त अधिकारी को नियुक्त किया जाना चाहिए क्योंकि समूची योजना निधि और योजना इतर निधि उसके हाथ में रहेगी। हर राज्य को इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि वह विधान मंडल के सामने पंचायती राज संस्थाओं का समेटा

हुआ वित्तीय हिसाब किताब पेश कर सके। यदि लेखा परीक्षा में कोई देरी हो तो राज्य सरकारों को तुरन्त उसकी जांच करनी चाहिए। यह देरी कुछ तो स्टाफ की कमी के कारण होती है और कुछ आडंबरयुक्त प्रक्रिया के कारण। इस बात का खास महत्व है कि पंचायती राज संस्थाओं के बारे में लेखा परीक्षा संबंधी बकाया आपत्तियों का शीघ्र समाधान किया जाना चाहिए क्योंकि सब नीचे के स्तरों पर होने वाले खर्च में जनता के प्रतिनिधियों का हाथ होता है। सरकार पंचायती राज संस्थाओं को जो अनुदान देती है, उसके उपयोग संबंधी प्रमाण-पत्र प्रस्तुत किए जाने का तरीका भी आसान बनाया जाना चाहिए। राज्य सरकार को विधान मण्डल की एक ऐसी कमेटी बनाए जाने के सवाल पर विचार करना चाहिए जो पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय और भौतिक कारगुजारी से खार तौर पर संबंधित हो। वित्तीय हिसाब-किताब पेश करने के अलावा, राज्य सरकार को पंचायती राज संस्थाओं के बारे में एक प्रशासनिक रपट विधान मंडल के पटल पर रखनी चाहिए।

10. मानव साधनों का विकास

वैसे तो समाज के विकास के लिए जनबल और धनबल दोनों की ही आवश्यकता पड़ती है लेकिन अनेक दशाओं में जनबल धनबल को भी मात देता है। मानव श्रम शक्ति के बिना धन की शक्ति अधूरी है। अतः मानव साधनों का विकास पंचायती राज संस्थाओं का प्रमुख दायित्व होना चाहिए।

तीन प्रकार की ट्रेनिंग दी जानी चाहिए : (1) अधिकारियों के लिए, (2) चुने गए प्रतिनिधियों के लिए, और (3) अधिकारियों और निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए मिले जुले कोर्स। ट्रेनिंग का प्रोग्राम प्रत्येक ट्रेनिंग ग्रुप की आवश्कता के अनुसार बदलता रहेगा। अधिकारियों तथा अन्य लोगों के लिए मिले-जुले प्रोग्राम होंगे, उनकी अवधि भी अलग अलग होगी। इसके लिये न सिर्फ मौजूदा संस्थाओं की चाल तेज करने की जरूरत पड़ेगी बल्कि उनकी तादाद और अधिक बढ़ानी पड़ेगी और उनके लिए अधिक साधनों की व्यवस्था करनी पड़ेगी। राज्य स्तर की ट्रेनिंग संस्थाओं में पुनः जान डालने के लिए भी सही कदम उठाए जाने चाहिएं। ग्राम विकास संबंधी राष्ट्रीय संस्थान को चोटी की अखिल भारतीय संस्था होना चाहिए। उसे ट्रेनिंग देने वालों की ट्रेनिंग, क्षेत्रीय अध्ययन, सलाह देने की योग्यता का विकास, खोज कार्य और राज्य में ट्रेनिंग के स्तर में सुधार जैसे कामों की व्यवस्था करनी चाहिए। इस काम के लिए उनका दर्जा बढ़ाया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में भारत सरकार को भी एक महत्वपूर्ण पार्ट अदा करना है। हरेक ट्रेनिंग प्रोग्राम का मूल्यांकन करना चाहिए ताकि समय समय पर जरूरी फेरबदल की जा सकें। प्रौढ़ शिक्षा के कार्यक्रमों को प्रधानता दी जानी चाहिए ताकि लोगों की सुप्त नागरिक चेतना को जगाया जा सके और पंचायती राज संस्थाओं के काम काज में विश्वास पैदा किया जा सके। एसे प्रोग्राम बनाने में पंचायती राज संस्थाओं का एक खासा रोल होना चाहिए।

अगर लोकतन्त्र को सफल बनाना है तो पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों में महिलाओं के विशाल वर्ग का सहयोग निहायत जरूरी है। उनके बिना इन संस्थाओं की सफलता की कल्पना करना बेकार है। दो प्रकार से उनका और अधिक सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। उन्हें न सिर्फ चुनाव में भाग लेने के लिए बढ़ावा दिया जाए बल्कि उन्हें निर्णय लेने के अवसर भी प्रदान किए जाएं। चुनाव में महिलाओं की इस साझेदारी के लिए यह व्यवस्था होनी चाहिए कि जिला परिषद और मण्डल पंचायत में महिलाओं के लिए दो सीट रिजर्व कर दी जाएं। कुछ प्रोग्रामों का अधिक संबंध स्त्रियों और बच्चों से होता है। उनके संचालन और देखभाल के लिए महिलाओं की कमेटी होनी चाहिए। इनका फल यह होगा कि वे अपने प्रोग्रामों के बारे में अपनी पसन्द की पूर्वताएं निश्चित कर सकेंगी। ऐसी कमेटी को जो प्रोग्राम खास तौर पर सौंपे जाएं उनके लिए मण्डल पंचायत के अधिकार दिए जाने चाहिएं। गांव में उद्योग धन्धों के विकास के जो कार्यक्रम बनाए जाएं, उनमें ऐसे प्रोग्राम तैयार करने पर खास ध्यान दिया जाए। जिनसे देहातों की स्त्रियों को लाभकारी रोजगार मिल सके। इससे उनकी प्रबन्ध क्षमता भी बढ़ेगी।

महिला मण्डलों की स्थापना पर बल दिया जाना चाहिए। पंचायती राज संस्थाओं की मार्फत लोकतंत्र पद्धति की सफलता बहुत कुछ देहातों के नौजवानों पर निर्भर करती है। देहातों के युवक मण्डल देहातों के नौजवानों का सही प्रतिनिधित्व नहीं कर सकते। इस कमजोरी को दूर करना होगा। पंचायती राज संस्थाओं और ग्राम विकास के प्रति देहातों के युवकों की रुचि जाग्रत करने के लिए युवा किसानों के क्लब बनाए जा सकते हैं। उचित कानूनी व्यवस्था द्वारा युवक मण्डल को पंचायती राज संस्थाओं में एक सहयोगी संस्था का दर्जा दिया जाना चाहिए। पंचायती राज संस्थाओं को नेहरू युवक केन्द्रों को संगठित करने के लिए प्रेरणा देनी है। पंचायतों की मार्फत राष्ट्रीय सेवा योजना शिविरों का आयोजन भी लाभकर होगा। पंचायती राज के लिए लोगों का सहयोग प्राप्त करने में स्वयं-सेवी एजेंसियों का रोल भी कम महत्व का नहीं होगा। उन्हें न केवल मजबूत किया जाना चाहिए बल्कि उनकी तारीफ भी की जानी चाहिए ताकि पंचायती राज संस्थाओं के प्रयासों को आगे बढ़ाया जा सके। जिन स्वयं सेवी एजेंसियों के पास पर्याप्त जानकारी और संगठन क्षमता है, वे पंचायती राज संस्थाओं को योजना तैयार करने में भी मदद दे सकती हैं। उनकी मार्फत सामाजिक परिवर्तन की दिशा में किए जाने वाले कार्यों के लिए सशक्त जनमत तैयार किया जा सकता है।

अन्य संस्थाओं से नाता

पंचायती राज संस्थाओं से हम यह आशा करते हैं कि वे लोगों के आर्थिक और सामाजिक कल्याण के सम्पूर्ण पक्ष पर विचार करेंगी। सहकारी समितियां तो केवल आर्थिक पक्ष को ही देखती हैं। अतः पंचायती राज संस्थाओं और सहकारी समितियों का रिश्ता यह है कि वे एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं।

उनमें न कोई बड़ा है और न कोई छोटा । वे एक दूसरे की पूरक हैं । दोनों के बीच यह रिश्ता पांच तरह का होगा :

(1) ऐसे कामकाज जिन्हें सहकारी संस्थाएं अधिक उपयुक्त और कारगर तरीके से कर सकती हैं ;

(2) ऐसे कामकाज जिनमें पंचायती राज और सहकारी संस्थाओं के मिलेजुले प्रयास की जरूरत होती है ;

(3) सहकारी समितियां जब पंचायती राज संस्थाओं के ऐजेन्ट के रूप में काम करती हैं ;

(4) ऐसे कामकाज जिनके सम्बन्ध में सहकारी समितियों को पंचायती राज संस्थाओं से सुविधाएं मिलती हैं ;

(5) जहां सहकारी समितियां ऐसे कार्यों में हाथ बंटाती हैं जिनके लिए मूल रूप से पंचायती राज संस्थाएं जिम्मेदार हैं ।

पंचायती राज संस्थाओं को सहकारी समितियों के संचालन और संगठन जैसे बढ़ावा देने और तालमेल रखने के कार्य करने चाहिएं । सहकारी समितियों से संबंधित नियामक कार्य स्वयं सहकारी समितियों द्वारा किए जाने चाहिएं ।

पंचायती राज संस्थाओं में यदि सहकारी समितियों के प्रतिनिधि होंगे तो उससे पंचायती राज संस्थाओं और सहकारी समितियों के बीच विचारों का आदान प्रदान होता रहेगा । सहकारी समितियों में पंचायती राज संस्थाओं के प्रतिनिधियों का होना जरुरी नहीं दीख पड़ता ।

शहरों और देहातों की नातेदारी पर इस दृष्टि से विचार किया जाना चाहिए कि निरन्तर विकसित होती हुई अर्थव्यवस्था की जरूरतें क्या हैं और उच्च स्तर की सेवाएं और सुविधाएं प्रदान करने के लिए किन तरीकों का सहारा लेना होगा । देहाती इलाकों को शहरों के खास खास इलाकों से जोड़ कर आर्थिक और सामाजिक उन्नति की जा सकती है । लेकिन यह कार्य संतुलित ढंग से होना चाहिए । विकास का लाभ किसी एक पक्ष के पास सिमट कर नहीं रह जाना चाहिए ।

आगे चलकर जब मौजूदा छोटी-छोटी पंचायतें बन जाएंगी तो मण्डल पंचायतों और छोटी नगर पालिकाओं के आपसी संबंध और अधिक सार्थक और उद्देश्यपूर्ण हो जांएगे । उनमें न केवल किसी हद तक बराबरी की भावना पैदा होगी बल्कि वे सप्लाई और सेवा के लिए औपचारिक रिश्ते कायम कर सकती हैं । मण्डल पंचायतों में छोटी-छोटी नगरपालिकाओं को मिलाना उचित होगा ! जहां तक मिलीजुली योजना का पद्धति का संबंध है, जिले की योजना में शहरी इलाकों के विकास के पहलू और देहाती इलाकों के नागरिक पहलू होने चाहिएं । जिला परिषदों में चार नगर-पाकालिओं और उपयुक्त इलाकों के प्रतिनिधित्व होने से शहरी संस्थाओं को बल मिलेगा और वे अपने कार्य का तालमेल मण्डल पंचायतों के कार्य से बिठा सकेंगी । जहां तक एस० एफ० डी० ए०, एम० एफ० ए० एल० जैसी विभिन्न खास एजेंसियों की मार्फत इन कस्बों में रहने वाले लोगों को लाभ पहुंचाने का संबंध है, छोटी-छोटी नगरपालिकाओं को मण्डल पंचायतों के बराबर ही माना जाना चाहिए । पंचायती राज संस्थाएं केन्द्र तथा राज्य स्तर के उन कारपोरेशनों और बोर्डों के लिए सहायक सिद्ध हो सकती हैं जो खास तौर पर व्यापार संवर्द्धन और हाट व्यवस्था जैसे व्यापारिक कार्यों के लिए स्थापित किए गए हैं । इस संदर्भ में पंचायती राज संस्थाओं का काम यह भी होगा कि वे स्थानीय संगठन तैयार करें और क्षेत्रवार खास जरूरतों का पता लगाएं । जिला परिषद् पर यह दायित्व होगा कि वे ऋण संबंधी समूची जरूरतों का अन्दाजा कर लें और अलग अलग इलाकों की स्थानीय जरूरतों के अनुसार उनके बंटवारे की व्यवस्था करें । निचले स्तर वालों को यह काम आगे बढ़ाना चाहिए । मण्डल पंचायतों को प्रादेशिक आधार ढांचा तैयार करना चाहिए और जांच के तरीकों और ऋण प्रस्तावों के औचित्य की जांच में बैंकों की मदद करनी चाहिए । ●

अनुवादक,
श्रीमती अनीता दुबे मार्फत श्री एस० डी० दुबे,
30, हौजरानी, नई दिल्ली-110007,

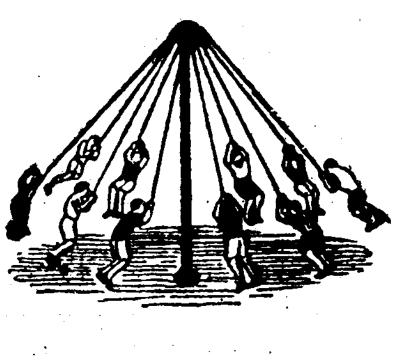

छोटे किसानों की काया पलटने वाला संगठन : लघु किसान विकास अभिकरण

एस० सत्यभामा

देहात के गरीब तबके की आर्थिक दशा में सुधार की सख्त जरूरत है, इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता लेकिन इस काम में देश में अकेली एक ही सबसे बड़ी एजेंसी जुटी हुई है और वह है छोटे किसानों की दशा सुधारने वाली लघु किसान विकास एजेंसी। शुरू में चौथी योजना के अधीन इसने गाइड के रूप में कार्य आरम्भ किया था। इसके पीछे भावना यह थी कि इससे पहले जो कार्यक्रम देहातों के विकास के लिए चालू किए गए थे, उनसे छोटे किसानों का कोई भला नहीं हुआ। इन कार्यक्रमों की संख्या इतनी कम थी कि इनसे उनकी जरूरतें पूरी ही नहीं होती थीं। पैदावार पर आधारित 1960 की नीति के फलस्वरूप हरित क्रान्ति देश में हुई। लेकिन तकनीकी तरक्की और आर्थिक विकास का लाभ देहातों के गरीब तबकों के पल्ले कतई नहीं पड़ा। इसलिए यह कहा जा सकता है कि छोटे किसानों की बेहतरी के लिए एजेंसी की शुरूआत एक ऐसा सजग प्रयास है, जिसके द्वारा विकास-कार्यों को देहात की ओर मोड़ा जा सकता है।

मार्के के निष्कर्ष

देहातों की बुनियादी हालत के बारे में तीन भारी-भरकम रिपोर्टें छप चुकी हैं। वे हैं अखिल भारतीय देहात ऋण पुनरीक्षण कमेटी रिपोर्ट, 1969, अखिल भारतीय कृषि संगणना रिपोर्ट, 1970-71 और अखिल भारतीय ऋण तथा निवेश सर्वे रिपोर्ट, 1971-72। इनमें न केवल आंकड़ों की भरमार है, बल्कि इनमें छोटे किसानों की दशा के बारे में कुछ निष्कर्ष भी हैं। भारत में जोतों का औसत आकार 2.30 हैक्टेयर का है। कोई साढ़े सात करोड़ जोतों में से लगभग 70 प्रतिशत जोतें दो हैक्टेयर की भी नहीं हैं। लेकिन ये जोतें 16 करोड़ 21 लाख हैक्टेयर के कुल क्षेत्र का 20.9 प्रतिशत मात्र है। बाकी 32.9 प्रतिशत जोतें 0.5 हैक्टेयर से भी छोटी हैं। कुल की 50 प्रतिशत से भी अधिक जोतें एक हैक्टेयर से भी कम हैं। 57 प्रतिशत जोतें दो हैक्टेयर से नीचे हैं। यह स्थिति सिंचाई वाली जोतों के बारे में है। जहां तक समस्त असिंचित जोतों की कुल संख्या के 89 प्रतिशत क्षेत्रफल का संबंध है, 57 प्रतिशत जोतें दो हैक्टेयर से भी कम क्षेत्र वाली हैं।

कितनी बड़ी जोत में किस तरह की फसल उगाई जाती है, इस नज़रिए से हिसाब लगाने पर पता चला है कि दो हैक्टेयर से कम भूमि वाली जोतों में आमतौर पर अनाज की खेती होती है। एक हैक्टेयर से नीचे की 89 प्रतिशत जोतों में और एक दो हैक्टेयर के बीच की जोतों में भी अनाज की फसलें उगाई जाती हैं। इन आकार समूहों में अनाज से इतर फसलों वाले क्षेत्र की प्रतिशतता केवल 11 और 14 प्रतिशत के बीच है, जबकि इससे बड़े आकार समूह में यह प्रतिशतता 16.5 से लेकर 26 प्रतिशत तक है। दो हैक्टेयर से भी कम क्षेत्र वाले छोटे फार्म खेती के लायक भूमि का, जो कुल का 10 प्रतिशत है, पूरा-पूरा उपयोग करते हैं। वे एक इंच ज़मीन भी खाली नहीं छोड़ते। बाकी 90 प्रतिशत भूमि का इस्तेमाल इससे बड़ी जोतों में किया जाता है।

अखिल भारतीय ऋण तथा निवेश सर्वे, 1971-72 के अनुसार समूचे ग्राम परिवारों की कुल देनदारी लगभग 3,921 करोड़ रुपये की है। इसमें से कुल का 48.72 प्रतिशत भाग अर्थात् भाग 191 करोड़ रुपये की देनदारी उन ग्राम परिवारों की है, जिनके पास दो हैक्टेयर से भी कम भूमि है अथवा जिनके पास भूमि है ही नहीं। इस सर्वे से पता चलता है कि छोटी जोत वाले किसानों पर कर्ज़ का भार ज्यादा रहता है। इसके अलावा, संस्थाओं से मिलने वाले कुल कर्जे का प्रतिशत जो 1961-62 में 15 प्रतिशत था, 1971-72 में बढ़कर 29 प्रतिशत तक पहुंच गया है। फिर भी गरीब तबका ज्यादातर कर्ज के मामले में संस्थाओं से इतर क्षेत्र का मोहताज़ रहता है। देहात ऋण पुनरीक्षण कमेटी ने भी इस बात की हिमायत की कि संस्थाओं से मिलने वाले ऋण तक छोटे किसानों की पहुंच बहुत कम है।

देहात ऋण पुनरीक्षण कमेटी का विचार है कि पैदावार के हिसाब से छोटे कृषि क्षेत्र का महत्व कम नहीं है, बल्कि वह इस बात से और भी बढ़ जाता है कि छोटे फार्मों की पैदावार बड़े फार्मों के मुकाबले किसी भी दृष्टि से घटिया नहीं है। एक से हालात में काम करने वाले छोटे किसान बड़े किसानों की तरह ही खेती के काम आने वाली खाद जैसी जरूरी चीजों का इस्तेमाल करते हैं। बड़े किसानों की तरह ही उन्हें भी आगे बढ़ने का शौक है। वे पीछे हटने में नहीं, बल्कि आगे बढ़ने में विश्वास रखते हैं। इस कमेटी ने ज़ोर देकर कहा है कि यदि खेती के धंधे में लगे छोटे किसानों के इतने बड़े तबके को कृषि और देहात विकास के कार्यक्रमों में साझीदार नहीं बनाया गया तो सामाजिक और आर्थिक दोनों स्तरों पर इसके बड़े बुरे नतीजे निकल सकते हैं। कमेटी ने इस बात की जरूरत महसूस की है कि जो किसान ज्यादा खुशहाल नहीं हैं, उन्हें राज्य और संस्थाओं की मार्फत मदद मिलनी चाहिए, ताकि वे खेती के उन्नत तरीके अपना कर पैदावार बढ़ा सकें और अपनी आय में वृद्धि कर सकें। इसलिए कमेटी ने सिफारिश की है कि एक खास एजेंसी बनाई जाए जिसकी मार्फत अपने पैरों पर खड़े हो सकने वाले छोटे किसानों को इस बात की प्रेरणा मिल सके कि वे खेती के उन्नत तरीकों को अपनाएं। इसके लिए किसानों को उपकरणों की सप्लाई, सिंचाई और मशीनों आदि की सेवा के रूप में सहारा मिलना चाहिए, ताकि वे खेतीबाड़ी के अपने धंधे को फैला सकें।

बुनियादी कार्यरिका

मोटे तौर पर छोटे किसानों से मतलब उन किसानों से है जिनके पास सिंचाई वाली दो हैक्टेयर से कम भूमि होती है। जिनके पास एक हैक्टेयर से भी कम भूमि होती है, उन्हें सबसे छोटा किसान माना जाता है, क्योंकि भारत में जोत के बंटवारे को देखते हुए इससे छोटे किसान की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती। खेतिहर मजदूर वे लोग हैं, जिनके पास छोटा-मोटा बसेरा होता है और जो अपनी आधी से भी ज्यादा कमाई खेती से अर्जित करते हैं। ये परिभाषाएं छोटे किसानों के लिए विकास एजेंसी के खास प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए अंगीकार की गई हैं। इस एजेंसी का खास उद्देश्य यह है कि नपीतुली भूमि की पैदावार को बढ़ाकर ज्यादा-से-ज्यादा किया जा सके और देहात की आबादी के इस तबके के लिए जल-संसाधनों में अधिक-से-अधिक वृद्धि की जा सके।

छोटे किसानों के लिए विकास एजेंसी के कार्यक्रम के बारे में बुनियादी दृष्टि इस प्रकार है :—

(1) छोटे किसान को जहां तक संभव हो, सिंचाई के मामले में आत्म-निर्भर बनाया जाए और उससे आधुनिक तकनीकी जानकारी का इस्तेमाल करने को कहा जाए। छोटे किसान की पहुंच जानकारी और कर्ज जैसी बुनियादी जरूरतों तक होनी चाहिए।

(2) सबसे छोटा किसान, जो सिर्फ खेती के बूते पर जीवित नहीं रह सकता, उसे उत्पादन के दूसरे तरीके अपनाने होंगे और आमदनी को बढ़ाने के लिए पशु-पालन का सहारा लेना होगा।

(3) उन्नत प्रकार की खेती और पशु-पालन के लिए निवेश और चलती पूंजी और कर्ज संस्थाओं की मार्फत मिलना चाहिए।

(4) इन कामों को अच्छी तरह योजना बनाकर सिलसिलेवार खास-खास इलाकों में इस तरह चलाया जाना चाहिए कि उनसे छोटे और सबसे छोटे किसानों और खेतिहर मजदूरों को फायदा पहुंच सके।

(5) इन कार्यक्रमों को विस्तार सेवा, खण्ड विकास कार्यालय, विकास संबंधी सरकारी विभाग, सहकारी समिति और महाजनी बैंक जैसे मौजूदा क्षेत्र संगठनों की मार्फत अमल में लाया जाना चाहिए।

काम का दायरा और लाचारियां

छोटे किसानों के लिए विकास ऐजेंसी, सोसायटी रजिस्ट्रेशन कानून के अधीन रजिस्टर की नई एक सोसाइटी है। इसमें स्थानीय विकास विभागों, वित्त जुटाने वाली संस्थाओं, जिला परिषद् जैसी स्थानीय विकास संस्थाओं के प्रतिनिधि होते हैं इसमें लाभ ग्रहण करने वालों के प्रतिनिधि भी होते हैं। इन एजेंसियों का काम यह होता है कि लाभ ग्रहण करने योग्य व्यक्तियों का पता लगाया जाए और सही-सही कार्य-क्रम तैयार करके उन पर अमल कराया जाए। बुनियादी तौर पर यह ताल-मेल रखने वाला और बढ़ावा देने वाला मंच होता है। एजेंसी छोटे किसानों के लिए 25 प्रतिशत की दर से और सबसे छोटे किसानों के लिए 33-1/3 प्रतिशत की दर से कृषि और पशु-पालन सम्बन्धी पूंजी लगाने पर सहायता प्रदान करती है, ताकि ये लोग जोखिम की परवाह न करते हुए बेधड़क होकर काम कर सकें और वित्त जुटाने वाली संस्थाओं को राहत मिल सके और पूंजी-निवेश के कार्यक्रमों के लिए संस्थाओं की मार्फत कर्ज मिल सके। एजेंसी इस बात को भी वज़न देती है कि छोटे और सबसे छोटे किसानों के खेतों पर प्रदर्शन कराए जाएं और सहकारी समितियों द्वारा एक जोखिम निधि की व्यवस्था की जाए। सहकारी समितियों और डेरी कारपोरेशनों की मार्फत दूध की बिक्री के लिए आधार ढांचा खड़ा करने में भी कुछ कुछ सहायता प्रदान की जाती है। किन्हीं इलाकों में देहात के कारीगरों के लिए ट्रेनिंग की व्यवस्था की जाती है।

छोटे किसानों के लिए विकास एजेंसी की योजना को चलाने में कतिपय लाचारियों का सामना भी करना पड़ता है। सबसे पहली लाचारी तो यह है कि इन एजेंसियों को देहाती इलाकों के सामाजिक व आर्थिक ढांचे के भीतर काम करना पड़ता है। उन्हें इस बात की छूट नहीं होती कि वे जमीन को अपनाने के रंग-ढंग अथवा पट्टेदारी की शर्तों में कोई बुनियादी फेर-बदल कर सकें। बिना किसी लिखत-पढ़त के भूमि को पट्टे और बंटाई पर लेने वालों का उस भूमि पर जिसे वह जोतते-बोते हैं, मौरुसी अथवा तबादले का हक तो होता नहीं। इसलिए इस योजना से उन्हें रत्ती-भर भी लाभ नहीं पहुंच सकता। दूसरे, एजेंसियों की कारगुजारी इस बात पर निर्भर करती है कि कार्यक्रमों को अमल में लाने के सम्बन्ध में स्थानीय संस्थाओं, संगठनों और विकास विभागों की क्षमता क्या है। इसलिए कार्यक्रमों को अमल में लाने की गति और स्थानीय संस्थाओं के विस्तार कर्मचारियों की दक्षता और लगन का आपस में चोली-दामन का साथ रहता है। जाहिर है कि कमजोर वर्गों के लिए कार्यक्रम चलाने वाली संस्थाओं को खड़ा करने में समय लगता ही है। तीसरे, इन एजेंसियों को एक ग्राम खामी का सामना करना पड़ता है। इन कामों के लिए कोई ठोस, ब्यौरेवार और साफ-सुथरी योजनाएं तो होती नहीं। अतः ये कार्यक्रम योजना सम्बन्धी शेष जगत से अलग-थलग पड़ जाते हैं। इसका एक आंशिक कारण यह भी है कि इन एजेंसियों का सीधा सम्बन्ध भारत सरकार से होता है। राज्य सरकारें न तो ज़रूरतों को एक साथ आंकती हैं और न ही खर्च में हिस्सा बंटाती हैं। चौथे, योजना का झुकाव कर्ज़ की व्यवस्था की ओर होता है। एजेंसी के ऋण ढांचे की क्षमता और ऋण के सम्बन्ध में उसकी रीति-नीति का सम्बन्ध बहुत कुछ इस बात से होता है कि कार्यक्रम से लाभ उठाने वालों का चयन किस प्रकार किया जाए और एजेन्सियों की समग्र कार्य-क्षमता क्या हो। सबसे बड़ी लाचारी तो यह है कि योजना की सफलता अथवा विफलता बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करती है कि प्रोजेक्ट अधिकारी और प्रोजेक्ट सैल के कर्मचारी योग्य व्यक्ति हों और इन पदों के लिए ठीक-ठीक लोगों का चुनाव किया जाए।

सफलताएं

इन कमियों के बावजूद छोटे किसानों

के लिए विकास एजेंसी ही जिला-स्तर का वह एकमात्र अकेला संगठन है, जिस पर कमज़ोर वर्गों की माली राहत सुधारने का समूचा दारोमदार रहता है। फिलहाल वह 1818 विकास खंडों में काम चला रही रही है। एजेंसी कमज़ोर वर्गों के मसलों की ओर ध्यान दिलाने की बेजोड़ कोशिश कर रही है। इस सम्बन्ध में वह न केवल कार्यक्रम चला रही है, बल्कि जिला-स्तर पर एक ऐसे बजट की दखभाल भी कर रही है जो स्थानीय ज़रूरतों के अनुसार घटता-बढ़ता रहता है।

शुरू-शुरू में 1970-71 में 4.1 लाख छोटे और सबसे छोटे किसानों और खेतिहर मज़दूरों को तलाशा गया। अब इन एजेंसियों ने लाभ ग्रहण कर सकने वाले 146.55 लाख लोगों को खोज निकाला है। इनमें से 1970-71 के मुकाबले, जब केवल 37 हज़ार लोगों को सहकारी समितियों का सदस्य बनाया गया था, अब 62.18 प्रतिशत लोगों को सदस्य बना लिया गया है। थोड़े समय के कृषि उत्पादन के लिए संस्थाओं से मिलने वाला ऋण, जो कि महाजनी बैंकों से नाम-मात्र के लिए मिलता था और सहकारी समितियों से 1 करोड़ से कुछ अधिक प्राप्त होता था, अब वह काफी मात्रा में मिलने लगा है। 1977-78 तक वह महाजनी बैंकों से 7.3 करोड़ रुपये तक और सहकारी समितियों से 69.7 करोड़ रुपये तक मिलने लगा है। 1970-71 में स्थिति यह थी कि निवेश के लिए मियाद वाले कर्ज़ महाजनी बैंकों से नाममात्र को मिलते थे और सहकारी समितियों से कुछ अधिक मिलते थे। पर अब यह स्थिति काफी बदल चुकी है। अब महाजनी बैंकों से 76.9 करोड़ रुपये और सहकारी समितियों से 180.3 करोड़ रुपये तक कर्ज़ मिलने लग गए हैं। शुरु में छोटे पैमाने की सिंचाई की 4000 यूनिटें थीं। अब छोटे और सबसे छोटे किसानों के लिए इन छोटे पैमाने की सिंचाई यूनिटों की संख्या बढ़कर 6.6 लाख तक पहुंच गई है। यह सब इन एजेंसियों के अथक परिश्रम का ही फल है। पशु-पालन कार्यक्रमों के अधीन आने वाली यूनिटों की संख्या पहले पहल बहुत ही मामूली-सी थी। परन्तु अब एजेंसियों की लगन के कारण यूनिटों की संख्या 5.8 लाख तक पहुंच चुकी है। 44.99 लाख तो उन्नत कृषि के कार्यक्रमों के अधीन आ चुकी हैं। इस प्रकार अब स्थिति यह है कि मार्च, 1978 तक छोटे किसानों, सबसे छोटे किसानों और खेतिहर मजदूरों के 60.18 लाख परिवारों का भला हो चुका है।

आदिवासियों का कल्याण

पांचवीं योजना के दौरान इस बात की ओर खास ध्यान दिया गया कि इन कार्यक्रमों का लाभ अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लोगों को भी मिले। छोटे और सबसे छोटे किसानों और खेतिहर मज़दूरों का ध्यान करते समय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के लोगों का खास ध्यान रखा गया। 1975 और 1978 के बीच की अवधि में जिन लोगों का चयन किया गया उनमें से 22 प्रतिशत लोग अनुसूचित जाति और अनुसूचित आदिम जातियों के थे। जिनमें से 21.72 लाख लोगों का चयन किया गया उनमें से 7.74 लाख लोगों को सहकारी समितियों का सदस्य बनाया गया। 79000 लोगों को सिंचाई की सुविधाएं मिलीं, 61000 लोगों को डेरी यूनिटों और 31000 को पशु-पालन सम्बन्धी अन्य कार्यक्रमों का लाभ मिला। 5.59 लाख लोगों ने उन्नत कृषि योजनाओं का लाभ उठाया। इस प्रकार 1975 से लेकर 1978 तक के तीन वर्षों के इन कार्यक्रमों के अधीन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम जातियों के कुल मिलाकर 7.30 लाख परिवारों का हित-साधन हुआ।

छोटे किसानों की बेहतरी के लिए लगाया गया एजेंसी रूपी यह नन्हा पौधा अब एक विशाल वृक्ष का रूप धारण कर चुका है। उन इलाकों में, जहां केन्द्रीय योजना लागू नहीं है, अनेक राज्यों ने ऐसी ही एजेंसियां स्थापित की हैं। छोटे किसानों के लिए विकास एजेंसी की इस भावना को कि छोटे और सबसे छोटे किसानों और खेतिहर मजदूरों की मदद की जाए, अब डी० पी० ए० पी० और सी० ए० डी० जैसे अन्य क्षेत्र विकास कार्यक्रमों में स्थान मिल चुका है। चालू वर्ष में इस भावना को और विराट् रूप प्रदान किया गया है। ग्राम विकास की तालमेल वाली एक ठोस योजना के अधीन 2000 खंडों में चालू कार्यक्रमों के अधीन काम शुरु होगा, और प्रति वर्ष इसमें 300 खंडों की बढ़ोतरी होती रहेगी।

पिछले कुछ वर्षों के अनुभव से पता चलता है कि उत्पादन के कार्यक्रमों, खासतौर से उन कार्यक्रमों के फलस्वरूप, जिनका उद्देश्य छोटी सिंचाई और डेरी जैसे पूंजी निर्माण करने वाले उद्योगों में सुधार करना अथवा नई पूंजीगत जायदाद को खड़ा करना है, छोटे और सबसे छोटे किसानों और खेतिहर मज़दूरों की आय में वृद्धि हुई है और उनके लिए रोज़गार के और अवसर खुले हैं। खास खास एजेंसियों की मार्फत छोटे और सबसे छोटे किसानों पर ध्यान केन्द्रित करने का यह फल निकला है कि उनकी पहुंच ऋण अथवा विस्तार जैसे संस्था वाले ढांचे तक हो गई है। अब नीति यह है कि धीरे धीरे इस बात की कोशिश की जाए कि किसानों को कर्ज़ सूदखोर जैसे व्यक्तियों की मार्फत न मिले बल्कि उचित ब्याज लेने वाली संस्थाओं से मिले। अब कर्ज़ सम्बन्धी राहत देने वाले कानून भी बन चुके हैं। इसका नतीजा यह हुआ है कि कमज़ोर वर्ग जरूरत के कुल कर्ज़ का एक तिहाई संस्थाओं से ही प्राप्त करने लगे हैं। अब छोटे और सबसे छोटे किसानों और खेतिहर मज़दूरों के लिए अलग से साधन जुटाए जाते हैं और उन्हें औरों के मुकाबले आसान शर्तों पर ऋण दिए जाते हैं। वास्तव में ये ठोस कदम है। सहकारी ऋण संस्थाओं के ढांचे और प्रबन्ध में परिवर्तन किए गए हैं। सहकारी समितियों में देहात के कमज़ोर वर्गों को भागीदार बनाया जा रहा है और उन्हें इन समितियों का मेम्बर भी बनाया जा रहा है। अब देहातों में छोटे और सबसे छोटे किसानों में सामूहिक भावना का उदय हो रहा है। सिंचाई के लिए अब वे साझे के कुएं बनाने लगे हैं और मिल जुलकर दूध के केन्द्र खोलने लगे हैं। अब ये लोग देहातों में सामूहिक भावना के प्रतीक बन चुके हैं। अब छोटे किसानों के जीवन में एक अनोखा निखार आने लगा है।

श्री आर. एन. सिंह
सी 2/26 ए. लारेंस रोड
एम. आई. जी. फ्लैट्स
दिल्ली-110035.

छात्रों व अध्यापकों
को
10 प्रतिशत
की विशेष छूट ।

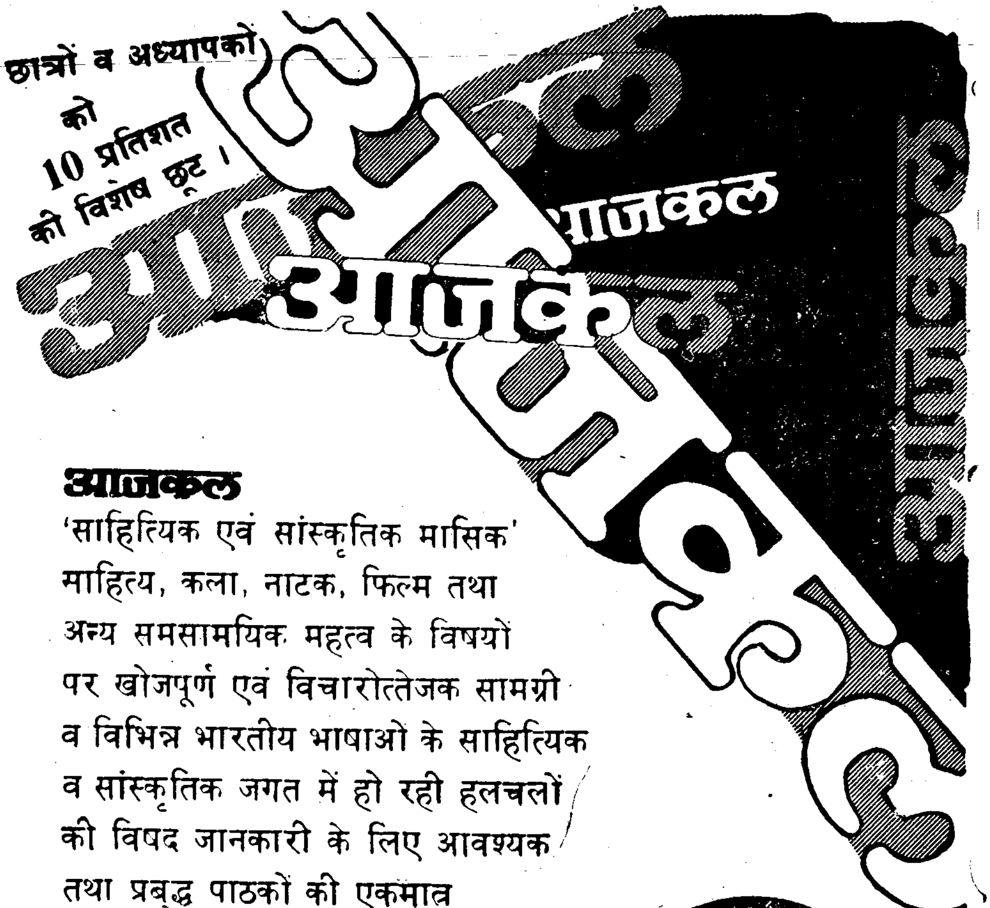

आजकल

'साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मासिक'
साहित्य, कला, नाटक, फिल्म तथा
अन्य समसामयिक महत्व के विषयों
पर खोजपूर्ण एवं विचारोत्तेजक सामग्री
व विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्यिक
व सांस्कृतिक जगत में हो रही हलचलों
की विषद जानकारी के लिए आवश्यक
तथा प्रबुद्ध पाठकों की एकमात्र
हिंदी पत्रिका ।

एक प्रति : 75 पैसे,
वार्षिक मूल्य – आठ रुपये,
द्विवार्षिक – चौदह रुपये,
त्रिवार्षिक – बीस रुपये ।

विस्तृत जानकारी के लिए लिखें :
व्यापार व्यवस्थापक,
प्रकाशन विभाग,
पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001

स्थानीय समाचारपत्र विक्रेता तथा रेलवे पुस्तक स्टालों पर उपलब्ध । davp 78/371

सार्वभौम मानव अधिकार

अनुच्छेद 1. सभी मनुष्यों को गौरव और अधिकारों के मामले में जन्मजात स्वतन्त्रता और समानता प्राप्त है। उन्हें बुद्धि और अन्तरात्मा की देन प्राप्त है और परस्पर उन्हें भाईचारे के भाव से बर्ताव करना चाहिए।

अनुच्छेद 2. सभी को इस घोषणा में सन्निहित सभी अधिकारों और आज़ादियों को प्राप्त करने का हक है और इस मामले में जाति, वर्ण, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीति या अन्य विचार-प्रणाली, किसी देश या समाज विशेष में जन्म, सम्पत्ति या किसी प्रकार की अन्य मर्यादा आदि के कारण भेदभाव का विचार न किया जाएगा।

इसके अतिरिक्त, चाहे कोई देश या प्रदेश स्वतंत्र हो, संरक्षित हो, स्वशासन रहित हो या परिमित प्रभुसत्ता वाला हो, उस देश या प्रदेश की राजनैतिक, क्षेत्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति के आधार पर वहां के निवासियों के प्रति कोई फर्क न रखा जाएगा।

अनुच्छेद 3. प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वाधीनता और वैयक्तिक सुरक्षा का अधिकार है।

अनुच्छेद 4. कोई भी गुलामी या दासता की हालत में न रखा जाएगा, गुलामी-प्रथा और गुलामों का व्यापार अपने सभी रूपों में निषिद्ध होगा।

अनुच्छेद 5. किसी को भी शारीरिक यातना न दी जाएगी और न किसी के प्रति निर्दय, अमानुषिक या अपमान-जनक व्यवहार होगा।

अनुच्छेद 6. हर किसी को हर जगह कानून की निगाह में व्यक्ति के रूप में स्वीकृति-प्राप्ति का अधिकार है।

अनुच्छेद 7. कानून की निगाह में सभी समान हैं, और सभी बिना भेदभाव के समान कानूनी सुरक्षा के अधिकारी हैं। यदि इस घोषणा का अतिक्रमण करके कोई भी भेद-भाव किया जाए व उस प्रकार के भेद-भाव को किसी प्रकार से उकसाया जाए, तो उसके विरुद्ध समान संरक्षण का अधिकार सभी को प्राप्त है।

अनुच्छेद 8. सभी को संविधान या कानून द्वारा प्राप्त बुनियादी अधिकारों का अतिक्रमण करने वाले कार्यों के विरुद्ध समुचित राष्ट्रीय अदालतों की कारगर सहायता पाने का हक है।

अनुच्छेद 9. किसी को भी मनमाने ढंग से गिरफ्तार, नजरबन्द या देश-निष्कासित न किया जाएगा।

अनुच्छेद 10. सभी को पूर्णतः समान रूप से हक है कि उनके अधिकारों और कर्तव्यों के निश्चय करने के मामले में और उन पर आरोपित फौजदारी के किसी मामले में उनकी सुनवाई न्यायोचित और सार्वजनिक रूप से निरपेक्ष एवं निष्पक्ष अदालत द्वारा हो।

अनुच्छेद 11. (1) प्रत्येक व्यक्ति, जिस पर दण्डनीय अपराध का आरोप किया गया हो, तब तक निरपराध माना जाएगा, जब तक उसे ऐसी खुली अदालत में, जहां उसे अपनी सफाई की सभी आवश्यक सुविधाएं प्राप्त हों, कानून के अनुसार अपराधी न सिद्ध कर दिया जाए।

(2) कोई भी व्यक्ति किसी भी ऐसे कृत या अकृत (अपराध) के कारण उस दण्डनीय अपराध का अपराधी न माना जाएगा, जिसे तत्कालीन प्रचलित राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार दण्डनीय अपराध न माना जाए और न उससे अधिक भारी दण्ड दिया जा सकेगा, जो उस समय दिया जाता, जिस तरह वह दण्डनीय अपराध किया गया था।

अनुच्छेद 12. किसी व्यक्ति की एकान्तता परिवार, घर या पत्र व्यवहार के प्रति कोई मनमाना हस्तक्षेप न किया जाएगा न किसी के सम्मान और ख्याति पर कोई आक्षेप हो सकेगा। ऐसे हस्तक्षेप या आक्षेपों के विरुद्ध प्रत्येक को कानूनी रक्षा का अधिकार प्राप्त है।

अनुच्छेद 13 (1) प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक देश की सीमाओं के अन्दर स्वतन्त्रतापूर्वक आने, जाने और बसने का अधिकार है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को अपने या पराए किसी भी देश को छोड़ने और अपने देश को वापस आने का अधिकार है।

अनुच्छेद 14. (1) प्रत्येक व्यक्ति को सताए जाने पर दूसरे देशों में शरण लेने और रहने का अधिकार है।

(2) इस अधिकार का लाभ ऐसे मामलों में नहीं मिलेगा जो वास्तव में गैर-राजनीतिक अपराधों से संबंधित हैं या जो संयुक्त राष्ट्रों के उद्देश्यों और सिद्धान्तों के विरुद्ध कार्य हैं।

अनुच्छेद 15. (1) प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी राष्ट्र-विशेष की नागरिकता का अधिकार है।

(2) किसी को भी मनमाने ढंग से अपने राष्ट्र की नागरिकता से वंचित न किया जाएगा या नागरिकता का परिवर्तन करने से मना न किया जाएगा।

अनुच्छेद 16. (2) बालिग, स्त्री-पुरुषों को बिना किसी जाति, राष्ट्रीयता या धर्म की रुकावटों के आपस में विवाह करने और परिवार को स्थापन करने का अधिकार है। उन्हें विवाह के विषय में वैवाहिक जीवन में, तथा विवाह विच्छेद के बारे में समान अधिकार है।

(2) विवाह का इरादा रखने वाले स्त्री-पुरुषों की पूर्ण और स्वतन्त्र सहमति पर ही विवाह हो सकेगा।

(3) परिवार समाज की स्वाभाविक और बुनियादी सामूहिक इकाई है और उसे समाज तथा राज्य द्वारा संरक्षण पाने का अधिकार है।

अनुच्छेद 17. (1) प्रत्येक व्यक्ति को अकेले और दूसरों के साथ मिलकर सम्मति रखने का अधिकार है।

(2) किसी को भी मनमाने ढंग से अपनी सम्पति से वंचित न किया जाएगा।

अनुच्छेद 18. प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अन्तरात्मा और धर्म की आजादी का अधिकार है। इस अधिकार के अन्तर्गत अपना धर्म या विश्वास बदलने और अकेले या दूसरों के साथ मिलकर तथा सार्वजनिक रूप में अथवा निजी तौर पर अपने धर्म या विश्वास को शिक्षा, क्रिया, उपासना तथा व्यवहार के द्वारा प्रकट करने की स्वतन्त्रता है।

अनुच्छेद 19. प्रत्येक व्यक्ति को विचार और उसकी अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का अधिकार है। इसके अन्तर्गत बिना हस्तक्षेप के कोई राय रखना और किसी भी माध्यम के जरिए से तथा सीमाओं की परवाह न कर के किसी की सूचना और धारणा का अन्वेषण, ग्रहण तथा प्रदान सम्मिलित है।

अनुच्छेद 20. (1) प्रत्येक व्यक्ति को शांति पूर्ण सभा करने या समिति बनाने की स्वतन्त्रता का अधिकार है।

(2) किसी को भी किसी संस्था का सदस्य बनने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता।

अनुच्छेद 21. (1) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश के शासन में प्रत्यक्ष रूप से या स्वतंत्र रूप से चुने गए प्रतिनिधियों के जरिए हिस्सा लेने का अधिकार है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश की सरकारी नौकरियों को प्राप्त करने का समान अधिकार है।

(3) सरकार की सत्ता का आधार जनता की इच्छा होगी। इस इच्छा का प्रकटन समय-समय पर और असली चुनावों द्वारा होगा। ये चुनाव सार्वभौम और समान मताधिकार द्वारा होंगे और गुप्त मतदान द्वारा या किसी अन्य समान स्वतन्त्रत मतदान पद्धति से कराए जाएंगे।

अनुच्छेद 22. समाज के एक सदस्य के रूप में प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार है और प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के उस स्वतंत्र विकास तथा गौरव के लिए—जो राष्ट्रीय प्रयत्न या अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग तथा प्रत्येक राज्य के संगठन एवं साधनों के अनुकूल हो—अनिवार्यतः आवश्यक आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक अधिकारों की प्राप्ति का हक है।

अनुच्छेद 23. (1) प्रत्येक व्यक्ति को काम करने, इच्छानुसार रोजगार के चुनाव, करने काम की उचित और सुविधाजनक परिस्थितियों को प्राप्त करने और बेकारी से संरक्षण पाने का हक है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को समान कार्य के लिए बिना किसी भेदभाव के समान मजदूरी पाने का अधिकार है।

(3) प्रत्येक व्यक्ति को जो काम करता है, अधिकार है कि वह इतनी उचित और अनुकल मजदूरी पाए, जिससे वह अपने लिए और अपने परिवार के लिए ऐसी आजीविका का प्रबन्ध कर सके, जो मानवीय गौरव के योग्य हो तथा आवश्यकता होने पर उसकी पूर्ति अन्य प्रकार के सामाजिक संरक्षणों द्वारा हो सके।

(4) प्रत्येक व्यक्ति को अपने हितों की रक्षा के लिए श्रमजीवी संघ बनाने और उनमें भाग लेने का अधिकार है।

अनुच्छेद 24. प्रत्येक व्यक्ति को विश्राम और अवकाश का अधिकार है। इसके अन्तर्गत काम के घंटों की उचित हदबन्दी और समय-मसय पर मजदूरी सहित छुट्टियां सम्मिलित हैं।

अनुच्छेद 25. (1) प्रत्यक व्यक्ति को ऐसे जीवन-स्तर को प्राप्त करने का अधिकार है जो उसे और उसके परिवार के स्वास्थ्य एवं कल्याण के लिए पर्याप्त हो। इसके अन्तर्गत खाना, कपड़ा, मकान चिकित्सा संबंधी सुविधाएं और आवश्यक सामाजिक सेवाएं सम्मिलित हैं। सभी को बेकारी, बीमारी, असमर्थता, वैधव्य, बुढ़ापे या अन्य किसी ऐसी परिस्थिति में आजीविका का साधन न होने पर जो उसके काबू से बाहर हो, सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है।

(2) जच्चा और बच्चा को खास सहायता और सुविधा का हक है। प्रत्येक बच्चे को चाहे वह विवाहिता माता से जन्मा हो या अविवाहिता से, समान सामाजिक संरक्षण प्राप्त होगा।

अनुच्छेद 26. (1) प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा का अधिकार है। शिक्षा कम से कम प्रारम्भिक और बुनियादी अवस्थाओं में निःशुल्क होगी। प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य होगी। टेक्निकल, यांत्रिक और पेशों संबंधी शिक्षा साधारण रूप से प्राप्त होगी और उच्चतर शिक्षा सभी को योग्यता के आधार पर समान रूप से उपलब्ध होगी।

(2) शिक्षा का उद्देश्य होगा मानव व्यक्तित्व का पूर्ण विकास और मानव अधिकारों तथा बुनियादी स्वतंत्रता के प्रति सम्मान की पुष्टि। शिक्षा द्वारा राष्ट्रों, जातियों

अथवा धार्मिक समूहों के बीच आपसी सद्भावना, सहिष्णुता और मैत्री का विकास होगा और शांति बनाए रखने के लिए संयुक्त राष्ट्रों के प्रयत्नों को आगे बढ़ाया जाएगा।

(3) माता-पिता को सबसे पहले इस बात का अधिकार है कि वे चुनाव कर सकें कि किस किस्म की शिक्षा उनके बच्चों को दी जाएगी।

अनुच्छेद 27. (1) प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्रतापूर्वक समाज के सांस्कृतिक जीवन में हिस्सा लेने, कलाओं का आनन्द लेने तथा वैज्ञानिक उन्नति और उसकी सुविधाओं में भाग लेने का हक है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी ऐसी वैज्ञानिक, साहित्यिक या कलात्मक कृति से उत्पन्न नैतिक और आर्थिक हितों की रक्षा का अधिकार है जिसका रचयिता वह स्वयं हो।

अनुच्छेद 28. प्रत्येक व्यक्ति को ऐसी सामाजिक और अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की प्राप्ति का अधिकार है जिसमें इस घोषणा में उल्लिखित अधिकारों और स्वतन्त्रताओं को पूर्णतः प्राप्त किया जा सके।

अनुच्छेद 29. (1) प्रत्येक व्यक्ति का उसी समाज के प्रति कर्तव्य है जिसम रहकर उसके व्यक्तित्व का स्वतंत्र और पूर्ण विकास संभव हो।

(2) अपने अधिकारों और स्वतंत्रता का उपयोग करते हुए प्रत्येक व्यक्ति केवल ऐसी ही सीमाओं द्वारा बद्ध होगा, जो कानून द्वारा निश्चित की जाएगी और जिनका एकमात्र उद्देश्य दूसरों के अधिकारों और स्वतंत्रताओं के लिए आदर और समुचित स्वीकृति की प्राप्ति होगा तथा जिनकी आवश्यकता एक प्रजातन्त्रात्मक समाज में नैतिकता सार्वजनिक व्यवस्था और सामान्य कल्याण की उचित आवश्यकताओं को पूरा करना होगा।

(3) इन अधिकारों और स्वतंत्रता का उपयोग किसी प्रकार से भी संयुक्त राष्ट्रीय सिद्धान्तों और उद्देश्यों के विरुद्ध नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 30. इस घोषणा में उल्लिखित किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाना चाहिए जिससे यह प्रतीत हो कि किसी भी राज्य, समूह, या व्यक्ति को किसी ऐसे प्रयत्न में संलग्न होने या ऐसा कार्य करने का अधिकार है, जिसका उद्देश्य यहां बताए गए अधिकारों और स्वतंत्रता में से किसी का भी विनाश करना हो। ×

लघु कथा

परीक्षा

मनु कौशिक

प्राचीन काल में विनयशान्ति नामक एक दानी एवं परोपकारी राजा राज्य करते थे। उनके राज्य में कहीं अधर्म नहीं था। प्रजा अत्यन्त सुखी थी। उसकी दान शीलता की कहानी स्वर्गलोक तक पहुंच चुकी थी। इन्द्र भी उससे घबरा गए। इसलिए उन्होंने सत्य को परीक्षा लेने के लिए कहा।

सत्य ने ब्राह्मण का वेश धारण किया। ब्राह्मण वेश में वह राजा के पास गया और उनसे साठ करोड़ मुद्राएं दान में मांगी। साथ ही उसने एक शर्त रखी कि, मैं वही धन दान में लूंगा जो कि आप के बाहुबल से अभी जीता गया हो। राजा ने उसकी बात मंजूर तो कर ली पर वह बहुत परेशान हो गए क्योंकि उनका कोई दुश्मन नहीं था। उन्होंने ब्राह्मण से दो माह का समय मांगा।

राजा ने विष्णु की तपस्या करनी प्रारम्भ की। एक महीने के अन्दर ही उनकी तपस्या अपना रंग दिखाने लगी। भगवान् विष्णु का आसन डोलने लगा। अन्ततः दूसरे महीने के अन्तिम सप्ताह में उन्होंने राजा को दर्शन दिए। उनकी इच्छा सुन भगवान् ने अपनी शक्ति द्वारा एक माया नगरी का निर्माण किया। उस देश के राजा से राजा विनयशान्ति ने घोर युद्ध किया तथा उसके खजाने से केवल साठ करोड़ मुद्राएं लीं।

राजधानी जाकर उन्होंने वह धन ब्राह्मणों को दे दिया। तब उनकी दानशीलता व भक्ति से प्रसन्न हो कर सत्य अपने वास्तविक रूप में आ गए। सत्य ने उनको वर मांगने के लिए कहा। राजा ने कहा, "आप को अपने पास रखना चाहता हूं।" तब से सत्य इस पृथ्वी पर निवास करने लगा। विनयशान्ति का युग स्वर्णयुग तथा सत्ययुग कहलाया।

दानशीलता व सत्यता द्वारा ही विनयशान्ति को मृत्यु के पश्चात् स्वर्ग प्राप्त हुआ और उन्हें इन्द्र के समीप ही सिंहासन प्राप्त हुआ।

—मनु कौशिक
आई-8, पटेल मार्ग,
गाजियाबाद-201001

उत्तर प्रदेश सर्वोत्कृष्ट मानव प्रयास की ओर

राम नरेश यादव

मद्य निषेध सही अर्थों में सर्वोत्कृष्ट मानवीय प्रयास है क्योंकि इसका उद्देश्य लोगों का जीवन स्तर ऊंचा उठाना और समृद्धि एवं सम्पन्नता का युग लाना है। मद्य निषेध का उद्देश्य मद्यपान तथा अन्य नशीले पदार्थों के उपयोग को हतोत्साहित करना है क्योंकि एक लम्बे अर्से तक इन सामाजिक कुरीतियों के कारण अनेक परिवार भावनात्मक तथा आर्थिक रूप से तबाह होते रहे हैं। प्रधान मंत्री श्री मोरारजी दसाई के शब्दों में मद्य निषेध गरीबी के विरुद्ध तथा शान्ति-पूर्ण घरेलू वातावरण बनाए रखने के लिए चल रहे संघर्ष का एक अनिवार्य अंग है।

मद्यनिषेध गांधी जी का भी अत्यन्त प्रिय विषय रहा है। यहां तक कि उन्होंने इस कुरीति को वेश्यागमन से भी घृणास्पद बताया है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि उन्होंने मद्य निषेध को जन कल्याण तथा राष्ट्रीय पुनर्निमाण के अपने जीवन दर्शन और कार्यक्रमों का एक अभिन्न अंग बनाया।

इस राष्ट्रीय कल्याणकारी कार्यक्रम को संविधान निर्माताओं ने भी उच्च प्राथमिकता दी, जिसका प्रमाण है भारतीय गणतन्त्र के संविधान में प्रतिष्ठापित नीति निर्देशक तत्वों में इसका शामिल किया जाना। संविधान के अनुच्छेद 47 में राज्यों को निर्देशित किया गया है कि पौष्टिक आहार का स्तर ऊंचा करना और जन-स्वास्थ्य में सुधार करना अपने प्राथमिक कर्तव्यों में एक समझें तथा उन्हें औषधि के रूप में उपयोग के अतिरिक्त स्वास्थ्य पर कुप्रभाव डालने वाले सभी नशीले पेयों तथा दवाओं के उपयोग पर रोक लागाने का प्रयास करना चाहिए।

इस नीति के अनरूप तथा समाज को मद्य एवं नशे की कुरीति से मुक्त करने के गांधी जी के स्वप्न को साकार करने के लिए राष्ट्र ने आगामी चार वर्षों में चरण-बद्ध तरीके से पूर्ण नशाबन्दी लागू करने का लक्ष्य रखा है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हम सभी को अपनी भरपूर शक्ति व ईमानदारी तथा निष्ठा से कार्य करना है।

कई वर्षों से उत्तर प्रदेश ने मद्य निषेध लागू करने की दिशा में अनेक महत्वपूर्ण कार्य किए हैं तथा सात और जिलों में पूर्ण मद्य निषेध लागू करके अप्रैल 1978 को पूर्ण नशाबन्दी लागू करने के राष्ट्रीय लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में एक और कदम उठाया है। इन सात जिलों सहित अब प्रदेश के 12 जिलों में पूर्ण नशाबन्दी लागू हो गई है। 1 अप्रैल से सम्पूर्ण प्रदेश में ताड़ी की बिक्री और उपयोग पर भी रोक लगा दी गई है।

मद्य निषेध लागू करने की दिशा में उत्तर प्रदेश द्वारा उठाए गए अन्य कदम हैं–चरस, गांजा तथा अफीम की बिक्री और उपभोग पर प्रतिबन्ध लगाना, कतिपय प्रमुख तीर्थ स्थानों तथा धार्मिक स्थानों और पांच प्रतिशत से अधिक एल्कोहल वाली बीयर की बिक्री पर रोक लगाना। इनके अतिरिक्त, 21 वर्ष से कम आयु वालों के हाथ शराब और नशीले पदार्थों को बेचना तथा शराब व नशीले पदार्थों से सम्बन्धित अधिष्ठानों में उन्हें सेवा-योजित करने पर रोक लगायी गई है। मद्यपान की आदत को बढ़ावा देने वाले विज्ञापनों के प्रकाशन पर प्रतिबन्ध तथा क्लबों में शराव के उपभोग पर रोक लगायी गई तथा देशी व विदेशी मदिरा की दूकानों के बिक्री के घण्टों में दो घण्टे की कमी की गयी है। साथ ही टिंक्चरों और पांच स्पिरिटों को भी मदिरा घोषित करके आबकारी कानून की परिधि में लाया गया है, ताकि उनका दुरुपयोग न हो सके।

अवैध आसवन और आबकारी अपराधों की रोकथाम के लिए उत्तर प्रदेश ने आबकारी कानून में व्यापक संशोधन किए हैं ताकि अपराधियों से कड़ाई से निपटा जा सके। कतिपय श्रेणी के आबकारी अपराधों को गैर-जमानती बनाया गया है। आबकारी अपराधों के लिए कारावास की अधिकतम अवधि तीन वर्ष तक तथा जुर्माना की रकम 5,000 रुपए तक बढ़ा दी गई है।

वर्तमान राज्य सरकार, जहां एक ओर निर्धारित समय में पूर्ण मद्य निषेध लागू करने के लिए प्रतिबद्ध है, वहीं दूसरी ओर वह इस तथ्य से भी पूर्णतया परिचित है कि मद्यनिषेध एवं ताड़ी निषेध लागू करने के लिए समाज के व्यापक हित में उठाए गए कदमों के फल-स्वरूप कुछ लोग बेरोजगार हो गए हैं। विशेषत: वे जो शराब और ताड़ी के व्यापार में लगे हों। सरकार बेकार हुए लोगों को वैकल्पिक रोजगार देने की योजनाएं बना कर उन्हें लगा रही है।

राज्य सरकार ने सिद्धांत रूप से यह निर्णय भी लिया है कि प्रदेश के वर्तमान 70 करोड़ रुपए के वार्षिक आबकारी राजस्व को आगामी चार वर्षों में घटाकर शून्य कर दिया जाए, जो स्वयं में पूर्ण मद्य निषेध को सफल बनाने के लिए सरकार के दृढ़ संकल्प का परिचायक है।

उत्तर प्रदेश समस्त राष्ट्र के साथ इस सर्वोत्कृष्ट मानवीय प्रयास की ओर उन्मुख हुआ है। भारत की संस्कृति और आत्मा मद्य सेवन को पसन्द नहीं करती। ऐसी दशा में कोई कारण नहीं कि पर्याप्त जन-शिक्षण, सेवा भाव से प्रेरित जन सेवकों एवं सामाजिक कार्य कर्ताओं तथा जनसहयोग से इस साहसिक कार्य में इसे सफलता न मिले।

राष्ट्रपिता की पावन जयन्ती के अवसर पर उत्तर प्रदेश की जनता से यह अपेक्षा करता हूं कि इस राष्ट्रीय हित और समाज सुधार के कार्य में सरकार का सहयोग देकर कार्यक्रम को सफल बनाए और इस अभिशाप को जनमानस से समूल नष्ट करने में सरकार का सहभाग करे। ●

मौत का दूत : मद्यपान

रबीन्द्र सिंह राठौर

आखिर इस जहर को लोग जानबूझकर क्यों गले से उतारते हैं ? हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इस जहर की वास्तविकता को भलीभांति जानकर ही आधुनिक सभ्यता के भ्रम में फंसी, हमारी नई पीढ़ी को बचाने का दृढ़ संकल्प किया था । मद्य-निषेध कार्यक्रम स्वतंत्रता संग्राम का ही एक अंग था । स्वतंत्रता संग्राम के दौरान स्वतंत्रता संग्राम सैनानियों ने शराब की दुकानों पर धरने भी दिए थे । किन्तु इसे दुर्भाग्य ही कहें कि हमारी राज्य सरकारें समूचे राष्ट्र को नरक के गर्त में ले जाने वाली इस बुराई को आय का साधन बनाती रहीं । धनिक वर्ग में मदिरापान अधिक सभ्य और उच्चता का सूचक माना जाने लगा है । श्रमिक वर्गों में विषाक्त शराब पिए जाने पर भयंकर दर्दनाक घटनाएं भी हो रही हैं जिससे सैकड़ों परिवार नष्ट होते देखे जा सकते हैं ।

राजस्थान विश्वविद्यालय के समाज शास्त्र विभाग ने डा० राम आहूजा के निर्देशन में जयपुर के बारह कालिजों में हाल ही में मादक वस्तुओं के सेवन के सम्बन्ध में सर्वेक्षण किया । सर्वेक्षण में जयपुर शहर के बारह कालिजों के कुल पन्द्रह हजार आठ सौ बयालीस लड़के-लड़कियों में से चार हजार दो सौ इक्यानवे लड़के-लड़कियों से प्रश्न पूछे गए तथा उन उत्तरों के आधार पर रिपोर्ट तैयार की गई । जिनसे प्रश्न पूछे गए उनमें से 89.9 प्रतिशत स्नातक स्तर की कक्षाओं में पढ़ते थे जबकि स्नाकोत्तर कक्षाओं में लड़के-लड़कियों का प्रतिशत 10.2 प्रतिशत था । सर्वेक्षण में शामिल किए गए लड़कों का प्रतिशत 75.8 था जबकि 24.2 प्रतिशत लड़कियां थीं । सर्वेक्षण से पता चला कि करीब 38.34 प्रतिशत लड़के-लड़कियां शराब पीते थे जबकि 36.51 प्रतिशत तम्बाकू तथा 25.15 प्रतिशत अन्य नशीली वस्तुओं का सेवन करते थे । भारतीय समाज में, जैसा कि आम तौर पर पाया जाता है, लड़कियां लड़कों की तुलना में अधिक सुसंस्कृत और आधुनिकता की दौड़ में जीवन मूल्यों को बदलने में कम तत्पर दिखाई देती हैं सर्वेक्षण के आंकड़े भी इसी बात की पुष्टि करते हैं । नशीली वस्तुओं का सेवन लड़कियों की तुलना में लड़कों में अधिक लोकप्रिय पाया गया है ।

लड़के-लड़कियों में नशे की लत की प्रवृत्ति बढ़ रही है और यह निश्चित ही जीवन में संघर्ष की भावना तथा कड़ी मेहनत पर बुरा असर डालेगी, उनकी मानसिक शक्ति कम हो जाएगी जिससे हो सकता है कि नई पीढ़ी दिशाहीनता की त्रासदी को झेलती रहे जो आगे चलकर चिन्ता का विषय हो सकती है ।

बीयर पीने का रिवाज तो कोका-कोला की भांति बढ़ता जा रहा है, इसे जौ का पानी कहते हैं । शायद वे अपनी शराब पीने की आदत को दिन-बदिन मजबूत कर रहे हैं । एक रिपोर्ट के अनुसार अमरीका में प्रति वर्ष लगभग 25,000 व्यक्ति शराब पीकर गाड़ी चलाते हैं और अपनी जान गंवा बैठते हैं । घायल होने वालों की संख्या भी साढ़े सात लाख के लगभग हैं । अमरीका के पागलखानों में प्रतिवर्ष 20,000 के करीब ऐसे व्यक्ति भर्ती किए जाते हैं जो अधिक शराब पीने के कारण अपना मानसिक संतुलन खो बैठते हैं ।

शराबों में पाए जाने वाले अल्कोहल का प्रतिशत इस प्रकार है :—

जिन :51 से 59 प्रतिशत

ब्रांडी :40 से 50 प्रतिशत

व्हिस्की :40 से 50 प्रतिशत

शेरी :18 से 22 प्रतिशत

बीयर :2 से 6 प्रतिशत

मनुष्य के शरीर में प्रति 100 मिलीलीटर रक्त में चार मिलीग्राम अल्कोहल की मात्रा होती है । शराब पीने पर रक्त में अल्कोहल की मात्रा बढ़ जाती है क्योंकि पीने के दो मिनट के अन्दर ही अल्कोहल आमाशय से निकलकर रक्त में प्रविष्ट हो जाता है और रक्त द्वारा यह विभिन्न अंगों में पहुंच जाता है जिससे ऊर्जा उत्पन्न होने से रक्त की गति तेज हो जाती है । जब ज्यादा मात्रा में शराब पी जाती है तो मनुष्य का मन पर से नियंत्रण हटने लगता है, और वह चीखने-चिल्लाने लगता है, लड़खड़ाने लगता है, उसकी आवाजखतभी लड़ डाती रहती है तथा ज्ञानेन्द्रियों पर से भी नियंत्रण उठ जाता है । नशे की हालत में जब आदमी किसी आदमी से अपशब्द कह देता है या गालीगलौज दे देता है या झगड़ा कर देता है तो इसका पश्चाताप उसे नशा उतरने के बाद ही होता है और उसको स्वयं पर बड़ी आत्मग्लानि होती है । काश ? यह नशा उतरने के के बाद की स्थिति उसकी हमेशा ही बनी रहती ।

विटामिनों की कमी शराबियों में आम पाई जाती है । विटामिन बी की कमी से बेरीबेरी नामक रोग हो जाता है । निकोटनिक एसिड की कमी से पैलागरा नामक रोग हो जाता है जिसके कारण चमड़ी पर लाल-लाल धब्बे हो जाते हैं और हाथ-पांवों का अधरंग भी हो जाता है । कुछ हालतों में आंखों की रोशनी भी जा सकती है । ज्यादा शराबखोरी से जिगर की एक बड़ी खतरनाक बीमारी, (सिरोसिस) हो जाती है । कई बार भूख बन्द हो जाती है, सारे शरीर में खुश्की पैदा हो जाती है, तथा पेट भी खराब रहने लगता है । शराबियों में जिगर का आकार बढ़ने की भी बीमारी पाई जाती है जोकि ज्यादा खतरनाक होती है । स्मरण शक्ति क्षीण हो जाती है तथा कड़ी मेहनत करने की शक्ति भी क्षीण हो जाती है । शराब से बुद्धि नष्ट हो जाती है, और बोलने में फर्क पड़ जाता है । शराब स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है । शराब मौत का दूत है ।

शराब से समाज में अनैतिकता तथा अपराधों में वृद्धि होती है । इसकी ओर से दृष्टि ओझल कर लेना कहाँ की बुद्धिमत्ता है ? शराब से मनुष्य आर्थिक रूप से गरीब हो जाता है तथा आलसी हो जाता है । महात्मा गांधी के कथनानुसार नशाबन्दी दरिद्रनारायण के उत्थान का कार्यक्रम है ।

शराब के कारण समाज में चोरी, व्यभिचार तथा गुण्डागर्दी बढ़ रही है। शराब से ही परिवार की शान्ति खतरे में पड़ती है, लड़ाई-झगड़े बढ़ते हैं, पति-पत्नी में विवाद तथा आत्म-हत्याओं को भी बढ़ावा मिलता है। परिवार का आर्थिक संतुलन बिगड़ने से भोजन, बच्चों की शिक्षा, वस्त्र और मकान आदि की समुचित व्यवस्था नहीं हो पाती। शराब पीने के कारण स्वास्थ्य खराब हो जाने से अकाल मृत्यु तथा रोगों को बढ़ावा मिलता है। मनुष्य आलसी हो जाता है जिससे उसकी कार्यक्षमता क्षीण हो जाती है। शराब के कारण मनुष्य का नैतिक स्तर निरन्तर गिरता जाता है।

शराब के अवगुणों से थोड़ा बहुत हर कोई परिचित है। यह मनुष्य की सोने जैसी देह को राख बनाकर रख देती है। इस अमूल्य जीवन का सही आनन्द उठाने के लिए जरूरी है कि इस जहर से दूर ही रहा जाये। आजकल बाजार में डाइसलफीरम तथा टैपेसिल नामक दवाइयां भी उपलब्ध हैं जिनके सेवन से शराब छोड़ी जा सकती है, पर सबसे अच्छा इलाज तो स्वयं पर नियन्त्रण ही है।

सभी राज्यों ने चार वर्ष में नशाबन्दी लागू करने का संकल्प लिया है, यह बरबादी रोकने का एक क्रांतिकारी कदम है। राज्य सरकारों को नशाबन्दी के लिए सामाजिक, राजनैतिक धार्मिक तथा वैधानिक सभी स्तरों पर प्रयास करने चाहिए। समाजहित, देशहित और जनहित में नशाबन्दी अत्यन्त आवश्यक है। ठंडे मुल्कों में जहां बर्फ पड़ती है, वहां शराब का का कुछ महत्व हो सकता है, पर भारत जैसे गर्म देश में इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। भारत में नशे का प्रचलन रोकना अत्यन्त आवश्यक है, नहीं तो इस के भयंकर परिणाम हो सकते हैं।

—अवर अभियन्ता (सिविल)
52, आजाद नगर,
आगरा-282002(उ०प्र०)

निर्माणों के पथ में

मोहन जोशी मस्ताना

करके मेहनत पावें फल
सोना बनता श्रम का जल
खेतों में अब गूंज रहा है अभियानों का कोलाहल ।।
नव युग की धारा को हम
सबल करों से मोड़ेंगे
रूढ़ि के दूषित दुर्गों को
संकल्पों से तोड़ेंगे
आंखें अब न बनें सजल
आज करो ना आए कल
किरणों से हस्ताक्षर करता यौवन का ये उदयाचल ।।
कमल वदन पर स्वेद बूंद
छिटके नील व्योम पर तारे
कर्मों की गीता जो पढ़ते
नवयुग के वे सूरज प्यारे
काटें तम का विंध्याचल
श्रम की गंगा बहे तरल
सारी धरती पर फैलाया हरियाला कोमल आँचल ।।
पुष्पों में ज्यों सौरभ बसती
कर्मठ हाथों में परिवर्तन
युग दृष्टा सी इन आंखों में
आंजे संकल्पों का अंजन
बंजर में जब चलते हल
बनती सोना तभी फसल
निर्माणों के पथ में जीवन कुकुमों सा बिखराता चल ।।

प्राचार्य महाराणा प्रताप उ० मा० वि०
बोलाई (जि० शाजापुर)

पहला सुख निरोगी काया

सर्दी के मौसम के रोग और उनका उपचार ✻ वैद्य रघुनन्दन प्रसाद साहू

क्वार-कार्तिक के महीनों में मौमम वदलता है । सुवह-शाम सर्दी पड़ती है और मध्यान्ह में तेज धूप पड़ती है। ऐसी अवस्था में स्वास्थ्य की रक्षा के लिए सावधानी बरतना आवश्यक है । जो लोग सावधानी नहीं बरतते वे अक्सर सर्दी-जुकाम, खांसी, वुखार, स्वास आदि के प्रकोप से पीड़ित हो जाते हैं । जुकाम होते ही जुसांदे का प्रयोग लाभकारी होता है जिससे जुकाम विगड़ने न पाएं। जब जकाम बिगड़ जाता है तो नाक के रास्ते पीला-पीला बलगम निकलता है। उस अवस्था में जुसांदे का प्रयोग लाभकारी होता है । जुंसादे में इन औषधियों का प्रयोग करना चाहिए—बनफसा, गाजमां, मुनक्का, बांसें के पत्ते, कटेरी की जड़, तुलसी के पत्ते, अदरक, बबूल के पत्ते, लभेडा, अमरबेल तथा त्रिफला समान भाग लेकर उबाले और चौथाई पानी रह जाए तो मिस्री मिलाकर पीएं । इससे जुकाम ठीक हो जाएगा । इन दिनों, दिन में नहीं सोना चाहिए । दिन में सोने से भी जुकाम हो जाया करता है।

जुकाम बिगड़ने पर खांसी, स्वास आदि भंयकर रोगों का प्रकोप हो जाया करता है । खांसी और दमे के बचाव के लिए निम्नलिखित घरेलू नुस्खे रामवाण हैं जिनका उपयोग करने पर डाक्टर, वैद्य और हकीम के पास जाने की आवश्यकता नहीं होगी ।

1. यदि सुबह, शाम अदरक का 2 चम्मच रस निकालकर और उसमें एक चम्मच शहद मिलाकर पी लिया जाए तो उस व्यक्ति की खांसी और दमा दूर हो जाता है । यदि एक बार सुबह पूरे ठंड के मौसम में जो व्यक्ति उसे पीता रहे तो उसे कभी भी खांसी या दमा होने का डर ही रहता है ।

2. पीपल, पीपरामूल : बहेड़ा, और सोंठ को बराबर मात्रा में मिलाकर कूटकर कपड़े में छान लें और इसके चूर्ण को एक चम्मच शहद में मिलाकर सुबह-शाम चाट लें तो सभी प्रकार की खांसी और दमा ठीक हो जाता है ।

3. सोंठ, पीपल तथा मिर्च इन तीनों औषधियों को बराबर मात्रा में लेकर कूटकर कपड़छन चूर्ण बना लें । इसके एक चम्मच चूर्ण को एक चम्मच घी और एक चम्मच गुड़ के साथ लेकर सुबह-शाम खाने से सभी प्रकार का दमा दूर हो जाता है

4. अडूसा के पत्ते, फल-फूल, जड़ तथा छाल जो भी मिल जाए उसको गुनगुने पानी में उबालें। जब एक चौथाई शेष रहे तो उसको छान कर पी लें । यह सभी तरह की खांसी को दूर कर देता है ।

5. इसी तरह सोंट और भारंगी का बनाया हुआ काढ़ नित्य प्रति सुबह-शाम पीने से खांसी और दमा दोनों जड़मूल से नष्ट हो जाते हैं ।

6. नागरमोथा, सोंठ और हरड़ तीनों औषधियों को बराबर मात्रा में लेकर चूर्ण बना लें । इस चूर्ण को दुगने पुराने गुड़ में मिलाकर मटर के समान गोली बना लें । इस प्रकार बनी हुई गोली को मुख में रखकर चूसते रहने से खांसी और दमा का प्रकोप दूर हो जाता है।

7. इसी तरह लौंग मिर्च और बेहड़ा का छिलका—इन तीनों चीजों का बराबर मात्रा में चूर्ण करके उसमें उतना ही खैरसार का चूर्ण मिला दें और इसको बबूल के छाल का काढ़ बनाकर उसमें अच्छी तरह घोंटकर उसकी भी मटर के बराबर गोली बना लें । इसको चूसने से भी हर तरह की खांसी दूर हो जाती है ।

वैद्य रघुनन्दन प्रसाद साहू
आयुर्वैदिक डिस्पेंसरी, गोल मार्केट
नई दिल्ली

साहित्य समीक्षा

कुहासे का दायरा : लेखक-अभिमन्यु अनन्त : प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट दिल्ली, मूल्य—15.00 रु०

हिन्दी जगत के पुराने प्रसिद्ध और माने हुए प्रकाशक की यह भेंट साजसज्जा, पृष्ठ सामग्री और छपाई आदि के सभी आकर्षणों के साथ उपन्यास प्रेमियों को आमंत्रित करती है। पुस्तक की इन विशेषताओं की रोशनी में मूल्य के उचित होने में कोई सन्देह की बात नहीं।

अभिमन्यु अनन्त मारिशस में हिन्दी के सुलझे हुए कथाकार है, और उनकी रचनाओं को भारत में भी लोकप्रियता एवं महत्व प्राप्त है। 'कुहासे का दायरा' तकनीकी दृष्टि से एक संपूर्ण उपन्यास है और मारिशस द्वीप के सामाजिक, राजनैतिक और वास्तविक चित्रण से भरपूर है जिससे प्रमाणित होता है कि लेखक महोदय ने वहां के जीवन को बड़ी गहरी और गम्भीर दृष्टि से देखा है। उपन्यास के पन्नों में अंकित मारिशस की मिली-जुली संस्कृति का प्रतिबिम्ब समुद्र की गोद में फलते-फूलते नन्हें-मुन्ने हिंदोस्तान होने का पता देता है जहां प्रकृति की दया दृष्टि और क्रोध के विपरीत पहलुओं की झांकियों, नागरिक और ग्रामीण जीवन के स्वाभाविक टकराव, समाज के ऊंच-नीच वाले वर्गों की नोक-झोंक से भरे पूरे माहौल में राजनीति की स्वार्थ भरी काली करतूतों के हाथों जिन सुलगती चिंगारियों को हवा दी जाती है, उनसे उमड़ते हुए धुंए ने धुंधलाहट का ऐसा दायरा स्थापित कर दिया है जिसकी अस्थायी ओट में धनेश और उसके परिवार पर मुसीबतों के पहाड़ टूटते रहते हैं। धनेश यानि कहानी का हीरो एक ऐसा पात्र है जो समाज के मध्यम श्रेणी के ईमानदार, पुरुषार्थी और सच्चाई पसंद परिवार से सम्बन्धित है और उसे अपने माहौल के हर अच्छे व्यक्ति से प्यार है। इस प्यार के दो भिन्न और विशेष रूप हमें उस व्यवहार में मिलते है जो वह सीधू की बेवा शांति से और अपनी प्रेमिका नीरू से शुरु से आखिर तक रखता है। कुछ गलतफहमियां और कुछ आकस्मिक घटनाएं माहौल के कुहासे को इस कदर धना कर देती हैं कि धनेश के लिए निराशा में डूब जाने के सिवा कोई रास्ता नहीं सूझता। अचानक निराशा की बदलियों की ओट में पनपते हुए सच्चे स्नेह और सम्बन्धों के कोंपल पक कर कुहासे को तोड़-फोड़ देते हैं। उजाला इस कदर स्थायी है कि सब मुसीबतें अतीत की गुफा में दुबक कर रह जाती है।

सामाजिक परिस्थितियों के चित्रण और वर्णन की सम्पूर्णता उन विभिन्न बोलियों पर आधारित है जो लेखक ने अलग-अलग व्यक्तियों के मुंह से बुलवाई हैं। यह अलग बात है कि कहीं-कहीं बातचीत में भाषा के झोल और उर्दू शब्दों के गलत प्रयोग का अनुभव होता है जो मारिशस में रहने वाले हिन्दी लेखक के लिए स्वाभाविक और अनिवार्य है।

फिर भी यह उपन्यास पढ़ने योग्य है। शुरू से आखिर तक रुचि का सिलसिला बना रहता है। वास्तविक जीवन की यह साधारण गाथा तेरी-मेरी गाथा लगती है। सच्चाई, पुरुषार्थ, ईमानदारी और सबसे अधिक सच्चे प्यार की जीत कथा के अन्त में सफलता के फूल न्यौछावर करती हुई कुहासे के दायरे का वजूद भंग कर देती हैं।

—श्रीमती राज प्रभाकर
बी०-58, पंडारा रोड,
नई दिल्ली

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (खण्ड-छियासठ) : प्रकाशक : प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली : मूल्य : 7.50 रु०

प्रस्तुत ग्रन्थ में स्वनामधन्य महात्मा गांधी के 1 अगस्त, 1937 से 31 मार्च, 1938 तक के अनेक पत्रों एवं भाषणों को प्रकाशित किया गया है। इसमें 13 परिशिष्ट, सामग्री के साधन-सूत्र तारीखवार जीवन-वृतान्त शीर्षक, एवं सांकेतिका भी पाठकों की सुविधा-हेतु सम्मिलित हैं।

पांच सौ साठ पृष्ठों के इस विशाल ग्रन्थ में महात्मा गांधी के परोपकार, क्रोध-नियंत्रण, शान्ति, अहिंसा, मद्य-निषेध, शिक्षा, सहिष्णुता आदि से सम्बद्ध विचारों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। गांधी जी शराबबन्दी के पक्के समर्थक थे। (पृ 90,179-90) वे स्वावलम्बी बनाने बाली शिक्षा के पक्षपाती थे। उसको वे भारतीय गांवों के लिए एक आर्थिक आवश्यकता एवं गरीबी तथा अमीरी के बीच खाई पाटने का साधन मानते थे। (152, 162-188)

महात्मा गांधी नागरिक स्वतंत्रता को अपराध करने की आजादी का पर्याय नहीं मानते थे। हिंसात्मक कार्यवाहियों और साम्प्रदायिकता में उनका विश्वास नहीं था। एक राजनीतिक दल के कार्यकर्त्ताओं को अपने दल के नेताओं की पूरी जानकारी के साथ आलोचना करने का वे समर्थन करते थे (पृ० 327–28)

सम्पूर्ण ग्रन्थ की भाषा सरल एवं प्रवाहपूर्ण है। कहीं भी अनुवाद-सम्बन्धी शिथिलता नहीं दिखाई देती। मुद्रण उत्कृष्ट है एवं मूल्य भी बहुत कम हैं।

—रामकृष्ण कौशिक,
आई-8, पटेलमार्ग,
गाजियाबाद-201001 (उ० प्र०)

धरती : (जून, 1978 अंक) सम्पादक: भगवत प्रसाद चतुर्वेदी, प्रकाशक: कृषि सूचना सेवा, विस्तार निदेशालय, कृषि और सिंचाई मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली, मूल्य : 30 पैसे : पृष्ठ संख्या : 24 ।

केन्द्रीय कृषि एवं सिंचाई मंत्रालय के विस्तार निदेशलय, द्वारा प्रकाशित धरती के सभी अंक जहां धरतियों के लिए उपयोगी होते हैं, वहां इसका जून अंक विशेष उपयोगी बन पड़ा है । पत्रिका के इस अंक में श्री महेश चन्द्र अग्रवाल की रचना 'हैजे से अपने प्राण बचाएं' ग्रामीण महिलाओं के लिए विशेष उपयोगी है । इसमें हैजे की रोकथाम के उपाय तथा सरल उपचार दिए गए हैं । क्योंकि शहर में नगरवासियों के लिए तो नगरों में बड़े-बड़े अस्पताल उपलब्ध होने तथा वहां हैजे के फैलने के बचाव की समुचित व्यवस्था होती है। गांवों में इन सब सुविधाओं के न होने से उक्त लेख में जो उपाय सुझाए गए हैं, उनसे ग्रामवासी लाभ उठा सकते हैं ।

पत्रिका में दी गई अन्य रचनाओं में भी ऐसे उपाय बताए गए हैं जिनसे खान-पान की वस्तुओं को विषाक्त होने से बचाया जा सकता है । भोजन सही ढंग से पकाएं, टमाटर की ज्यादा पैदावार कैसे लें, कहीं लू न लग जाए तथा शिशु को संतुलित आहार दीजिए आदि रचनाएं गृहणियों के लिए अधिक उपयोगी होंगी ।

कुल मिलाकर पत्रिका का प्रकाशन अच्छा बना है। पत्रिका का आवरण पृष्ठ काफी अच्छा है तथा प्रूफ की अशुद्धियां भी नगण्य हैं । सम्पादक बधाई के पात्र हैं ।

—मोहन लाल फक्कड़,
बी०-1/155, न्यू मोती नगर
मार्ग नं०-3,
नई दिल्ली-110015.

टेलीविजन : लेखक : डा० वीरेन्द्र भटनागर, प्रकाशक : शिक्षा भारती, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली, मूल्य : 5.00 रु० ।

समीक्ष्य पुस्तक 'टेलीविजन' जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है टेलीविजन से सम्बद्ध विभिन्न जानकारी पाठकों को कराती है। प्रकाशकीय वक्तव्य के अनुसार आज के युग में विज्ञान की महत्ता दिनों-दिन बढ़ती जा रही है और रोजमर्रा की जिन्दगी इससे जुड़ गई है और इसीलिए 'आज का विज्ञान' माला की प्रकाशन योजना शुरू की गई जिसमें विभिन्न वैज्ञानिक आविष्कारों की जानकारी देने के लिए पुस्तकों का प्रकाशन किया जाता है । प्रस्तुत पुस्तक 'टेलीविजन' भी इसी प्रकाशन योजना के तहत है।

प्रस्तुत पुस्तक में टेलीविजन से सम्बद्ध सारी जानकारी चार भागों में दी गई है । हमारे जीवन में टेलीविजन का क्या स्थान और महत्व है, टेलीविजन का आविष्कार कैसे हुआ और आज की विकसित अवस्था में कैसे पहुंचा । टेलीविजन केन्द्र पर कैसे कार्य होता है, किस प्रकार यह कार्य करता है, टेलीविजन सेट और उसकी देख भाल कैसे की जाती है, रंगीन टेलीविजन किस प्रकार कार्य करता है, टेलीविजन से सम्बन्धित नई खोजें क्या हैं—इन सब की बखूबी जानकारी पुस्तक में सहज और प्रामाणिक तौर पर प्रस्तुत की गई है ।

पुस्तक में अनेक रेखांकन दिए हैं जिनसे टेलीविजन से सम्बद्ध जानकारी आसानी से पाठकों की समझ में आ जाती है।

इसके साथ ही पुस्तक में परिशिष्ट भी हैं जिसमें भारत के टेलीविजन केन्द्र और प्रसारण केन्द्र, टी० वी० लाइसेंसों की संख्या, टेलीविजन केन्द्र और प्रसारण केन्द्रों की चैनल संख्या आदि को प्रस्तुत किया गया है ।

टेलीविजन रखने वाले लोगों के लिए तो यह पुस्तक आवश्यक है ही, साथ ही सामान्य पाठकों के लिए भी यह अत्यन्त उपयोगी है ।

—भारती शर्मा
स्टाफ क्वार्टर,
20गुरुद्वारा राकबगंज रोड,
नई दिल्ली-1

मंगलोदय

लेखक—ब्रज भूषण : प्रकाशक—किताबघर, गांधी नगर, दिल्ली-31, पृष्ठ संख्या 267, मूल्य—16.00 रु० ।

'मंगलोदय' ग्रामीण पीड़ाओं, विवशताओं, अभावों और संघर्षों पर लिखित एक मौलिक उपन्यास है। यह एक ऐसी उद्देश्य पूर्ण सर्जनात्मक, चरित्रप्रधान और सामाजिक कृति है जो अपनी सहज एवं स्वाभाविक मौलिकता से समाज की परम्परागत आर्थिक, मानसिक तथा चारित्रिक रूढ़ियों को झकझोर कर रख देती है।

गांव के लोग छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए कैसे कटते-मरते रहते हैं, इसका उपन्यास में सुन्दर एवं मार्मिक चित्रण हुआ है। लेखक ने गांव की गंदी एवं निम्नस्तरीय राजनीति का खूब भंडा फोड़ किया है। उपन्यास में सामयिक ज्वलन्त समस्याओं—अछूतोद्धार, ग्रामोत्थान, शराबबन्दी, प्रौढ़शिक्षा, आदि पर लेखक ने प्रसंगानुकूल लेखनी चलाई है। डाक्टरों का गांवों के प्रति उपेक्षापूर्ण दृष्टिकोण लेखक को सहन नहीं है। अतः उसने नवप्रशिक्षित डाक्टर उदय से गांव की ओर लौटने का साहसिक कदम उठावा कर एक प्रेरक एवं प्रशंसनीय कार्य किया है। इस प्रकार लेखक राष्ट्र व समाज की आधारभूत समस्याओं पर निर्भीक लेखनी उठाने तथा सौद्देश्य कथा साहित्य लिखने में सिद्धहस्त है।

कथा सुगठित है और स्वाभाविक गति से आगे बढ़ती है। लेखक ने इस उपन्यास की कथा इतने आकर्षक ढंग से निर्मित की है और उसका शनैः-शनैः इस प्रकार उद्घाटन किया है कि पाठक चमत्कृत रह जाता है। कथा की मुख्य विशेषता यह है कि वह पाठक को अभिभूत किए रहती है। कुतूहल आद्योपान्त बना रहता है। घटना-चक्र अप्रत्याशित रूप से घूमता चला जाता है।

पात्रों का चरित्र सम्यक् ढंग से विकसित हुआ है। सभी पात्र जीवन्त प्रतीत होते हैं। उदय और मंगला के चरित्र चित्रण में तो लेखक ने कमाल कर दिखाया है। अन्य पात्र भी स्वाभाविक वातावरण के अनुकूल लगते हैं।

इस भांति नवीन मान्यताओं को स्पर्श करती हुई यह अछूती कृति पाठकों की भावना और विचारों के साथ-साथ व समानान्तर चलने में पूर्ण समर्थ है। वस्तुतः औपन्यासिक क्षेत्र में यह कृति एक नूतन, मौलिक, साहसिक और उद्देश्यपूर्ण प्रयास है। विवेकशील पाठक इसे पढ़ने के पश्चात् कभी बुराई के मार्ग पर चलने की हिम्मत नहीं करेंगे। वे बुराई के रास्ते पर चलने से पूर्व अनेक बार सोचेंगे।

प्रस्तुत उपन्यास आधुनिक युग की परिस्थितियों से गहरा साक्षात्कार कराता है। वस्तुतः उपन्यासों में नवीनता, अछूतापन, क्रांतिकारी कथानक तथा नूतन विचारों की खोज करने वाले पाठकों को यह रचना संतुष्ट कर सकेगी। सृजनात्मक और उद्देश्यपूर्ण लेखन में इसकी गिनती सदा रहेगी।

—डा० भक्त राम पाराशर
13/236 गीता कालोनी
गांधीनगर, दिल्ली-110031

बच्चों की देखभाल : मूल-लेखक : डा० पी० तिरुमल राव; रूपान्तर : लक्ष्मीरमन वर्मा, प्रकाशक: राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली : मूल्य 9.00 रु०, पृष्ठ: 197।

बच्चों के जन्म-पालन-पोषण एवं स्वास्थ्य आदि के सम्बन्ध में विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए डा० पी० तिरुमल राव ने 'ए हैंड बुक आफ चाइल्ड केयर' पुस्तक की रचना की। 'बच्चों की देखभाल' इसी पुस्तक का रूपान्तर हैं। यह दो खण्डों, अटठाईस शीर्षकों एवं अनेक उपशीर्षकों में व्याप्त है। प्रथम खण्ड में गर्भाधान, प्रसव की तैयारी नवजात शिशु की देखभाल, उसके आहार आदि विषयों पर संक्षेप में विचार किया गया है। द्वितीय खण्ड में बालकों के रोग तथा उनकी रोकथाम, दुर्घटनाएं, पढ़ाई एवं परिवार कल्याण पर लेखक का स्पष्ट अध्ययन बच्चों के माता-पिताओं का मार्ग-दर्शन करता है।

प्रस्तुत पुस्तक में बच्चों के जीवन की प्रथम पांच वर्षों की समस्याओं, आवश्यकताओं और उनके सार्वांगीण कल्याण-कार्यों की संक्षेप में चर्चा की गई है। पाठकों की सुविधा के लिए पुस्तक के अन्तिम तीन पृष्ठों (195-197) पर हिन्दी अंग्रेजी में पारिभाषिक शब्दावली भी दी गई हैं।

निश्चित रुप से यह एक अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है।

—डा० इलारानी कौशिक
आई-8, पटेलमार्ग,
गाजियाबाद-201001
(उ० प्र०)

लज्जाहरण : (उपन्यास) : लेखक : **विमल मित्र**; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, कशमीरी गेट, दिल्ली पृष्ठ संख्या : 142 मूल्य : 10 रु०

भारत की सांस्कृतिक समृद्धि सदियों से संसार के अन्य देशों की स्पर्धा और ईर्ष्या का विषय रही है। यहां के भव्य मन्दिर वास्तुकला के सर्वोत्तम स्वरूप को साकार करते रहे हैं और उन मन्दिरों में प्रतिष्ठित मूर्तियां दर्शकों के मन को बांध कर सचमुच ही आध्यात्मिक अनुभूतियों में मग्न करती हैं। यही कारण है कि भौतिक अभावों से ग्रस्त आम भारतीय जब इन मूर्तियों के दर्शन कर लेता था तो सारे दुःख-दर्द को भूलकर आस्था-निष्ठा से आपूरित हो उठता था। इतना ही नहीं ये मूर्तियां लक्ष-लक्ष भारतीयों की आस्था-श्रद्धा की केन्द्र बिन्दु बनकर उन्हें संगठन के सुदृढ़ सूत्र में बांधे रखती थीं। विदेशी आक्रांता गजनबी या गोरी ने इन प्रतिमाओं को भंजित करके मानो भारतीयों की एकता के आधार को ही चकनाचूर करना चाहा था, पहले ये विदेशी भारत में आकर अपनी दुर्दान्त वृत्ति का परिचय इन मन्दिर-मूर्तियों को चकनाचूर करके दिया करते थे। अब दूसरे किस्म के विदेशी' सभ्य तरीकों से इन मूर्तियों की तस्करी करके अपनी दस्यु वृत्ति का बखूबी परिचय दे रहे हैं।

विमल मित्र के 'लज्जाहरण' उपन्यास में मूर्तियों से जुड़ी सांस्कृतिक तस्करी की समस्या को अत्यन्त विचारोत्तेजक रूप में उठाया गया है। तापस के रूप में मित्र जी ने सांस्कृतिक चोरी करने वाले व्यक्ति के मनोविज्ञान को इस उपन्यास के जरिये बड़ा खूबी से प्रस्तुत किया है। तापस के रूपमें आज के आम और औसत भारतीय के मन को उजागर किया गया है। दुनिया में वह 'रुपये को ही असली टानिक' मानता है। दुनिया में इन्सान के जितने भी रोग-शोक हैं, उनका एक मात्र इलाज वह रुपया ही मानता है और इसी रुपये की खातिर वह अपने देश की बेशकीमती सांस्कृतिक धरोहर को चोरी करके तस्करी द्वारा विदेशों में भेजने से भी बाज नहीं आता।

किस्सागोई की तर्ज में बयान की गई इस औपन्यासिक कृति में देश की लज्जा का हरण करने वाली अपने ही देशवासी की बेहयाई की करनी है। यह करनी अकेले तापस की ही नहीं है, वरन इसमें महाजनी वृत्ति का मूलचन्द भी शरीक है। दक्षिण भारत के चिंगलीपट कस्बे के पुराने मन्दिर के पुजारी की लड़की रम्भा, उसके चाहक नरसिंहम् और महादेवन भी शामिल हैं। पैसे के अभाव से ग्रस्त और पैसे के लिए मारा-मारा फिरने वाला आज का औसत भारतीय अपने ही हाथों अपने ही पूर्वजों की सहेजी निधि को लुटवाने में किस कदर मजबूर है—इस मर्म को भी मित्र जी ने इस उपन्यास में उकेरने की कामयाब कोशिश की है।

मनोरंजन की दृष्टि से तो यह उपन्यास पाठकों को प्रिय लगेगा ही, पर इसमें फिल्मी तर्ज या फुटपाथी स्तर का मसालेदार मनोरंजन नहीं है मनन की वृत्तिका को भी निरन्तर उद्बुद्ध बनाये रखा गया है इस उपन्यास में।

प्रो० बिश्वम्भर 'अरुण'
जानकी निवास,
मानपाड़ा,
आगरा-282003 (उ०प्र०)

ग्रामीण स्वास्थ्य : लेडी डाक्टर बच्चे की रोग परीक्षा करती हुई

छत्तीसगढ़ का लोक-मानस और परिवार कल्याण

नारायण लाल परमार

जब तक किसी भी राष्ट्रीय अभियान को देश की ग्रामीण जनता का सम्पूर्ण सहयोग नहीं मिलता, तब तक सफलता की कामना महज मृगतृष्णा ही बनी रहेगी। परिवार कल्याण के मामले में भी इस बात को अच्छी तरह समझ कर सरकार ने छोटे परिवार का संदेश घर-घर तक पहुंचाने का बीड़ा उठाया है।

छत्तीसगढ़ी जनमानस में भी अब यह बात घर कर गई है कि आज की संकटापन्न स्थिति से छुटकारे का एकमात्र उपाय है—जन्म-दर को कम करना। यही कारण है कि गांव-घर की बहू-बेटियां, जो कल तक इस चर्चा से शरमाती थीं, आज मिल-बैठकर गाती हैं—

"दीदी मोर करव परिवार नियोजन।
एखर अरथ है बढ़िया घर अउ
बढ़िया कपड़ा-भोजन।
गंज अक लइका होथे दरिद्री
बाढ़े दुख सत जोजन
जिनगी सरी बिटोना होवे
अइसन काम करो झन।
बनेच बात सरकार बताइस
दूसर रद्दा कावर खोजन।
गांव हमर वन जाही सुरग ओ
सुनता बांधो सब्बो झन।
दीदी मोर करव परिवार नियोजन।"

(ओ बहिन! परिवार नियोजन अपनाओ। इसका अर्थ है अच्छा घर, अच्छे कपड़े और अच्छा भोजन। ज्यादा बच्चे होने से दुख बढ़ता है। हमें ऐसा काम नहीं करना चाहिए जिससे कि सारी जिन्दगी मुसीबत बन जाय।)

निस्संदेह परिवार कल्याण कार्यक्रम को अब गांवों में काफी सफलता मिल रही है। लोग यह बात भली-भांति समझने लगे हैं कि आज के मनुष्य के लिए इस कार्यक्रम से बढ़कर और कोई भलाई नहीं हो सकती।

आज घर-आँगन, खेत-खार सभी जगह परिवार कल्याण की ही बातें सुनाई पड़ती

हैं। चाहे ढेकी पर धान कुटाई हो या खेत में निराई। पनघट पर पनिहारिनें हों या भाभियों की मुंहलगी ननदों की फुसफुसाहट।

"सुन मोर बहिनी, चिटिक तो सुन ग्रो
नवा जमाना ग्राए हैं।
धरती माता सँवरगे हावे।
मन के घयला मरगे हावे।
नवा जनम है, नवा है जिनगी।
जुन्ना सबो परागे हैं।"

(ग्रो बहिन! जरा सुन तो। नया जमाना ग्रा गया है। धरती माता सँवर गई है। मन का घड़ा भर गया है। सबको जैसे नया जन्म मिला है, जिन्दगी नई हो गई है।। पुराना सब समाप्त हो गया है।)

"ये सरकार ह मया करत है
जतन करत है, दया करत है
नया योजना लागू होंगे
भाग हमर ग्रब जागे हैं।
कर लो ग्रब परिवार नियोजन
इहिच ह कर ही संकट मोचन
रहई बसई सुघ्घर हो जा ही
ग्रब ग्रंधियार भगागे है।"

(हमारी सरकार का हम पर बड़ा प्रेम है। यह हमारी सुरक्षा में प्रवृत्त है। नई योजना लागू हो गई है। हमारा भाग्योदय हो रहा है। परिवार नियोजन कर लो। इससे दुख दूर होने वाला है। इसी से हमारा जीवन स्तर सुधरेगा। ग्रज्ञान का ग्रंधेरा ग्रब जा चुका है।)

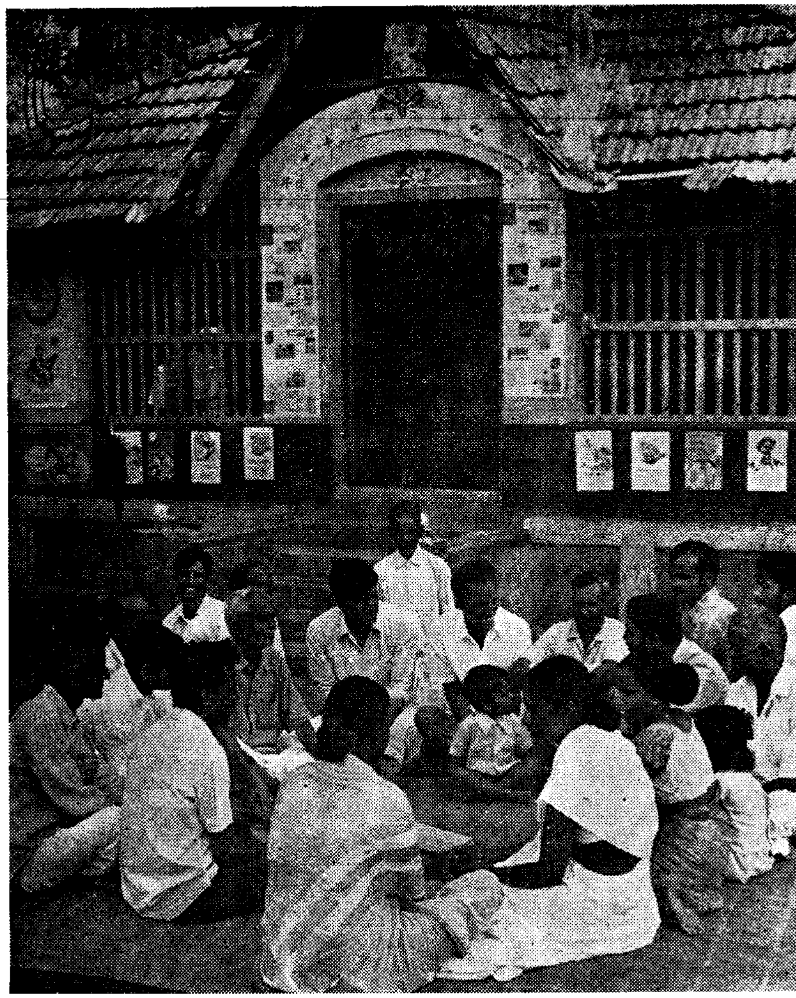

महिला डाक्टर महिलाओं और पुरुषों को नसबन्दी और बन्ध्यकरण आपरेशन के लिए प्रेरित करती हुई।

"गांव सुखी ग्रउ देश सुखी ग्रो
रहही काबर कहूं दुखी ग्रो
जिनगी है उजरागे है।
जुर मिल के ग्रब गावव बहिनी,
नान्हें कुटम बनावव बहिनी।
देखों तो, सुख हमर दुआरी
बइठे रस मां पागे है।
सुन मोर बहिनी।"

यह सच है कि परिवार नियोजन एक व्यक्तिगत मामला है फिर भी इसकी ग्रहमियत ने ग्राज इसे राष्ट्रीय मसला बना दिया है। ग्रामवासी एक महत्वपूर्ण इकाई होने के नाते यह दायित्व महसूस करने लगे हैं कि ग्राज सरकार के हाथ मजबूत करना ही उनका एकमात्र धर्म है। परिवार कल्याण ग्राज एक उद्देश्य बन चुका है। छत्तीसगढ़ का लोकमानस यही चाहता है कि राष्ट्र-विकास के इस ग्रभियान में वह भी समभागी हों।

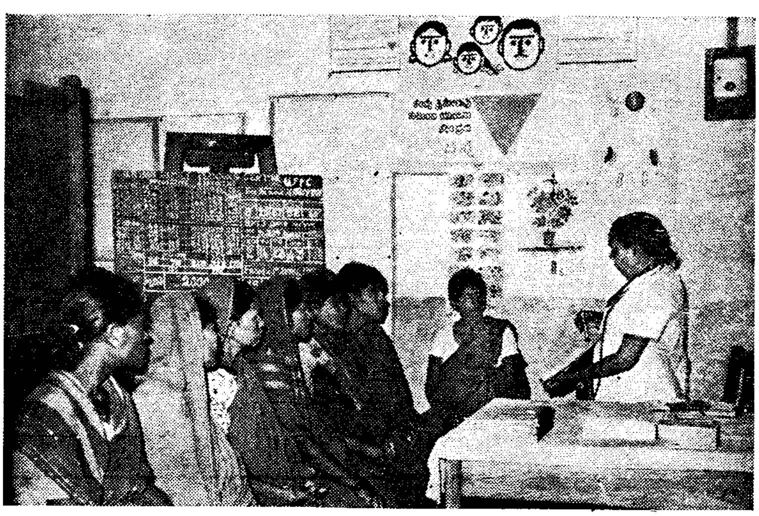

परिवार नियोजन शिविर में भाग लेते हुए

(हमारा घर से साभार)

Regd. No. D (D)/98

'जहाज' छाप सुपरफ़ॉस्फ़ेट का चमत्कार...

किसानों के लिए भरपूर पैदावार... कमाई बेशुमार...

अनेक वर्षों के अनुभव से किसानों की तसल्ली हो गयी है कि 'जहाज' छाप सिंगल सुपरफ़ॉस्फ़ेट से भरपूर फ़सल मिलती है।

जितनी भरपूर फ़सल, उतनी ही ज़्यादा पैदावार! और ज़्यादा पैदावार यानी किसानों और राष्ट्र की समृद्धि!

आपका विश्वासपात्र नाम

दि धरमसी मोरारजी केमिकल कं. लि.
प्रॉस्पैक्ट चैम्बर्स,
३१७/२१ डॉ. दादाभाई नौरोजी रोड, बम्बई ४०० ००१.

DMC/F 202

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित ।